:: अध्याय : छः ::

:: समस्याओं का निरूपण शिल्प एवं भाषिक संरचना ::

यह एकाधिक बार निर्दिष्ट किया जा चुका है कि ऋषभचरण जैन का रचनाकाल उस समय से संलग्नित है जिसमें समाज के अन्तर्गत विविध प्रकार की सुधारप्रवृत्तियां व्याप्त थीं । अंग्रेजों के कारण जहां हमारा देश पराधीन हुआ , हमारे देश का शोषण हुआ , हमारी समृद्धि और वैभव का ह्रास हुआ ; वहां एक लाभ यह भी हुआ कि उनके अनुषंग से बहुत-सी बातों पर पुनर्विचार की प्रक्रिया शुरू हुई । देश की एकता और राष्ट्रीयता के विचार अधिकाधिक विकसित होने लगे । हिन्दू-समाज में परिव्याप्त ऐसी रूढ़ियां और परंपराएं जो समाज के विकास में साधक न होकर बाधक थीं , अब त्याज्य समझी जाने लगीं । दया-

नंद सरस्वती , राजा राममोहनराय , ईश्वरचन्द्र विद्यासागर , महात्मा ज्योतिबा फूले , लोकमान्य तिलक , गोपालकृष्ण गोखले , महात्मा गांधी , विवेकानंद , रामकृष्ण परमहंस , स्वामी श्रद्धानंदजी , बंकिमचन्द्र , शरत्चन्द्र , रवीन्द्रनाथ टैगोर जैसे महान चिंतकों के कारण समूचे समाज में एक नयी चेतना ने करवट ली थी । फलतः इस समय के लेखन में हमें तत्कालीन समाज की अनेकानेक समस्याओं का निरूपण मिले यह स्वाभाविक ही कहा जायेगा । प्रस्तुत अध्याय के प्रारंभ में हम ऐसी कतिपय समस्याओं की चर्चा का उपक्रम लेकर चले हैं । ऋषभचरण जैन के साहित्य में जिन समस्याओं का आकलन हुआ है , उन्हें हम निम्न शीर्षकों में विभाजित कर सकते हैं :- {अ} पारिवारिक समस्याएं , {आ} सामाजिक समस्याएं , {इ} आर्थिक समस्याएं , {ई} वैयक्तिक या मनोवैज्ञानिक समस्याएं तथा {उ} इतर समस्याएं ।

{अ} पारिवारिक समस्याएं :

उपन्यास तथा कहानी प्रकारान्तर से मानव-जीवन का ही अध्ययन-निरूपण है , अतः उसमें परिवार का केन्द्रस्थ होना स्वाभाविक ही कहा जायेगा । पारिवारिक विघटन , पिता-पुत्र के संबंध , भाई-भाई के संबंध , गृह-कलह इत्यादि को हम इसके अन्तर्गत ले सकते हैं । यहां एक बात ध्यातव्य है कि ये तमाम समस्याएं परस्पर अन्तर्ग्रथित होती हैं । कोई एक समस्या पारिवारिक होने के साथ-साथ सामाजिक, आर्थिक , राजनीतिक या मनोवैज्ञानिक भी हो सकती है । उदाहरण के लिए शराबनोशी की समस्या जहां वैयक्तिक है , वहां पारिवारिक और मनोवैज्ञानिक भी है । पारिवारिक विघटन की समस्या यों प्रकटतया तो पारिवारिक है , परंतु उसका संबंध किसी सामाजिक या राजनीतिक स्थिति-विशेष से भी हो सकता है । आलोच्य लेखक के साहित्य में भी ये सब समस्याएं परस्पर अनुस्यूत मिलती हैं ।

भारतीय परिवार पहले मुख्यतः ग्रामीण परिवेश से जुड़ा हुआ था, परंतु औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के कारण उस पर नगरीय दबाव बढ़े हैं और परिवार क्रमशः विभक्त होता गया है। अब संयुक्त-परिवार के स्थान पर विभक्त-परिवार मिलते हैं। "तपोभूमि" का सतीश अपने परिवार से अलग रहता है। वहां पति-पत्नी में जो गांठ पड़ती है, उसका कारण भी यही है। परिवार यदि संयुक्त होता तो शशि और नवीन को एकान्त में मिलने का अवसर ही न रहता और तब शायद नवीन भी शशि को उस प्रकार का पत्र न लिख सकता जिसमें उसने शशि को लिखा है कि उसे सतीश को पूछना भी नहीं बल्कि सूचित-भर करना चाहिए।[1] इस उपन्यास के सभी पात्रों की जो वैयक्तिक विचारधारा है, उसके मूल में उनका परिवार से विच्छिन्न होना ही है। "भाई" उपन्यास में रामसनेही और सिंभू के पारिवारिक विघटन के पीछे सिंभू की पत्नी सरूपी का गृह-कलह उत्तरदायी है। रामसनेही और सिंभू के भातृ-प्रेम के उदाहरण उस ज्वार में दिए जाते थे, परंतु सरूपी के कर्कशा स्वभाव के कारण दो भाइयों में शत्रुता के बीज पड़ गये। एक स्थान पर स्वयं सिंभू अपनी पत्नी के कर्कशा स्वभाव के विषय में कहता है -- " हे भगवान, तू एक वक्त रोटी दीजो, पर ऐसी स्त्री किसीको नहीं। ईश्वर! या मुझे उठा ले या इसे। जो स्त्री पति के सुख-दुःख का खयाल किए बगैर हर वक्त उसका खून पीने को तैयार रहती है, मैं उसके बिना भी रह सकता हूं, और उसे छोड़कर मरना भी पसंद कर सकता हूं। "[2]

"अन्धी दुनिया" कहानी का ~~xxxxx~~ काशीनाथ अविवाहित रहना चाहता है क्योंकि उसे अपनी मां के कर्कशा-स्वभाव का ज्ञान है। परंतु मां की मरणासन्न अवस्था के कारण वह विवाह कर लेता है। विवाह के उपरांत मां ठीक हो जाती है और उन दोनों के जीवन को नरक बना देती है। मां के स्वभाव के कारण अन्ततः काशीनाथ और उसकी पत्नी अलग रहने चले जाते हैं, परंतु लोगों के बीच-बचाव से वे पुनः साथ रहने लगते हैं। यहां बाह्यतः वे भले साथ रहते हैं, पर

मानसिक अलगाव तो आ ही गया है ।[3] "संयोग" कहानी का ब्रजमोहन दिल्ली में अकेले किराये के मकान में रहता है क्योंकि उसके पिता उस पर विवाह के लिए दबाव डाल रहे थे, अतः वह सुल्तानगंज जिले के एक गांव से दिल्ली में आ जाता है । यहां इस पारिवारिक विघटन के पीछे नयी सामाजिक चेतना तथा शिक्षा आदि कारणभूत है । ब्रजमोहन शिक्षित है, इसीलिए इस तरह से सोचता है ।[4]

"मन का पाप" कहानी का अमरनाथ विधुर हो जाता है । लोग उसे दूसरे विवाह के लिए खूब समझाते हैं, पर वह अपनी प्रथम पत्नी के कलह-प्रिय स्वभाव से इतना तंग आ गया था कि विवाह के नाम पर ही बिदकने लगता है । गृह-कलह के ऐसे कई दृश्य "भाई", "मन्दिर-दीप", "चम्पाकली" प्रभृति उपन्यास तथा "अंधी दुनिया", "विचित्र विवाह", "वे आँखें", "दुनियादारी" जैसी कहानियों में मिलते हैं ।

सास-बहू का संबंध भारतीय परिवेश में सांप-नेवले जैसा है । "अंधी दुनिया" में काशीनाथ की मां एक ऐसी कलह-प्रिय सास है जो किसी भी स्थिति में अपनी बहू से खुश नहीं रह सकती है । उसके हर काम में वह नुक्श निकालती है । कम खाती है तो कहती है कि यह मुझे बदनाम करने के लिए है । पैर दबाती है तो कहती है कि यह तो अपने खसम को दिखाने-भर को कर रही है । वैसे उसके इस स्वभाव के मनोवैज्ञानिक कारण भी हैं । जवानी में वह विधवा हुई थी । बेटे को खूब कष्ट और लाड़ों से पाला था । अतः बहू के हाथों बेटे को खो देने की आशंका ही उससे यह सब करवाती है ।

पति-पत्नी के संबंधों में प्रेम, सेवा-भावना, त्याग, विश्वास आदि का होना बहुत जरूरी है । इन गुणों के अभाव में दोनों का सहजीवन नरक हो सकता है । "मन का पाप" कहानी का अमरनाथ अपनी पत्नी से आजिज आ गया था । "भाई" उपन्यास का शिंभू भी इसका एक उदाहरण है । "स्वर्ग की देवी" कहानी का

बंसीलाल अपनी पत्नी का विश्वास खो देता है , क्योंकि वह एक पत्नी के रहते हुए नैनीताल के किसी गांव से पहाड़िन मेमो को ब्याह लाता है । "तीन इक्के" में पति-पत्नी के अलगाव और दुराव के कारणों में भी पति की बुरी आदतें जिम्मेदार हैं । उपन्यास का नायक मुरारीलाल दयाशंकर की बुरी सोहबत में पड़कर जुआ , शराब, फटकाबाजी , चरस-गांजा , रण्डीबाजी जैसे ऐबों में ऐसे डूबता है कि पितामह रायबहादुर श्यामलाल की सारी शानो-शौकत गारद हो जाती है और स्थिति यह आती है कि दिल्ली के एक गंदे मुहल्ले में छः रूपये किराये के मकान में रहना पड़ता है । सुबह खाकर शाम को खाने का ठिकाना नहीं है । मुरारीलाल की पत्नी इसमें भी खुश है क्योंकि अब मुरारीलाल कम-से-कम घर में तो रहता है ।[5]

"तपोभूमि" में सतीश और शशि पति-पत्नी हैं , पर दोनों में एक प्रकार का मानसिक अलगाव है । शशि नवीन को प्रेम करती थी , नवीन से उसकी सगाई भी हो गई थी , पर उसके चले जाने के कारण विवशता में उसे सतीश से विवाह करना पड़ता है । ऐसी स्थिति में यदि सतीश अपनी अहम्मन्यता तथा पुरुष होने के अहंकार को भूलकर शशि को भरपूर प्रेम देता तो शायद उसके मन की खाई भर जाती । पर वह तो अधिकार चाहता है । फलतः दोनों के बीच की मानसिक दूरियां बढ़ती ही जाती है ।

पिता-पुत्र के संबंधों में भी प्रेम , विश्वास , सहकार आदि गुण होने चाहिए । इनके अभाव में ये दोनों अलग-अलग द्वीप से बन जाते हैं । मां का प्रेम कई बार इन संबंधों में सिमेण्टिंग का काम करता है । पर जहां मां नहीं होती , वहां इन देनों में दूरियां बढ़ती ही जाती हैं । "मयखाना" का नायक अपने पिता से काफ़ी दूर चला जाता है , क्योंकि उसकी मां का देहान्त हो गया है और उसकी परवरिश नौकरों के हाथों होती है । बाप को अपनी बेशुमार दौलत तथा अपनी विलासी महफिलों से फुर्सत नहीं है । वह पुत्र के

लिए पैसे तो फेंक सकते हैं , पर उसके लिए उनके पास समय का अभाव है । फलतः पुत्र शैशव काल से ही शराबनोशी की आदत में गिरफ्त हो जाता है । "तीन इक्के" के रायबहादुर श्यामलाल अपने व्यवसाय तथा प्रतिष्ठा के चक्कर में ऐसे फंसे रहते हैं कि उन्हें अपने पुत्र मुरारीलाल पर ध्यान देने का अवसर ही नहीं मिलता है , और जब अवसर मिलता है तो बहुत देर हो चुकी होती है । "संयोग" के ब्रजमोहन के पिता पटवारी हैं और वे बेटे को चटपट विवाहित कर देना चाहते हैं । यहां पिता-पुत्र के विलगाव का कारण पीढ़ीगत दूरी ﴾ जनरेशन गेप﴿ है । "रखैल" कहानी के नन्दू की भी अपने बाप से कभी पटती नहीं थी । "बाप जब तक जिए उनसे उसकी बनी नहीं ; दोनों के दिमाग सदा भिन्न-भिन्न दिशा में चलते रहे । " [6] वस्तुतः यहां भी कारण प्यार का अभाव है । माता का देहान्त हो गया था और बाप को अपने व्यवसाय और कारोबार से फुर्सत नहीं । यहां मेरी स्मृति में डा. देसाई की गज़ल का एक शेर कौंध जाता है -- " बढ़ेगा प्यार प्यार से ; तयशुदा ये बात है । " [7] वस्तुतः जिस बच्चे को प्यार मिलता है , वही आगे चलकर दूसरों को प्यार दे सकता है । जिसका जीवन बिना प्यार के सिसकता रहा हो वह आगे चलकर "प्रोब्लेमेटिक " बन जाता है ।"महानगर की मीता" का नायक भी निहायत स्वकेन्द्री हो जाता है , क्योंकि उसे भी बचपन में किसीका प्रेम नहीं मिला था । [8]

"भाई-भाई" के रिश्तों में भी मेल-मुहब्बत , सौहार्द्र , उदारता , त्याग आदि के भाव होने चाहिए । परंतु यह अक्सर देखा गया है कि "जर जमीन और जोरू " के कारण भाई-भाई के रिश्ते में फरक आ जाता है । "भाई" उपन्यास के सिंभु तथा रामसनेही में बड़ा ही प्यार था , परंतु सिंभु की पत्नी सरूपी के कर्कशा स्वभाव के कारण दोनों भाइयों का बैठना-उठना ही बन्द नहीं होता , बल्कि दुश्मनावट स्थापित हो जाती है और एक-दूसरे के जान के दुश्मन हो जाते हैं । सिंभु गांव के पहलवान नूरन के पास जाता है , तब नूरन कहता है -- " मैं एक इन्सान की हैसियत से तुम्हारी पूरी मदद करूंगा ।

सिर्फ़ तुम्हारा इशारा चाहता हूं , फिर इस बदमाश को मजा चखाना मेरा काम है । " [9] यहां नूरन रामसनेही को खत्म कर देने की योजना के साथ आया था और उसमें सिंभू अपनी सम्मति देता है । "पसर" चराते समय कुतुबी कुछ लठैतों को लेकर रामसनेही पर हमला करता है :, पर रामसनेही अच्छा लठैत था । वार बचा जाता है और अपना बचाव करता है । इसमें कुतुबी को लाठी लग जाती है और वह मर जाता है , तब अदालत में भी सिंभू गलत बयान देता है । यथा -- " कोई दो पहर रात गए मेरे पेट में दर्द उठा । हाजत रफा करने के लिए मैं बाहर निकला । गांव के पास वाले जोहड़ में पानी नहीं था , इसलिए मैं आगे नाले के पास जाकर बैठा । इतने में मैंने किसीके चिल्लाने की आवाज़ सुनी । देखा , थोड़ी दूर पर दो आदमी लड़ रहे हैं , और उनमें एक चिल्ला रहा है । मैंने पहचाना आवाज़ कुतबी की थी । मैं खड़ा हो गया । इतने में एक आदमी जमीन पर गिर पड़ा , और दूसरा उस पर पड़े-पड़े पर ही लाठियां चलाने लगा । जमीन पर पड़ा हुआ आदमी कई बार चिल्लाया और ठंडा हो गया । " [10] रामसनेही को इसके कारण फांसी की सजा हो जाती है । पर उपन्यास के अंत में सिंभू को पश्चाताप करते हुए बताया है । वह रामसनेही की पत्नी दुर्गा से कहता है कि रामसनेही निर्दोष है और मैं सीधे जज साहब के पास जाऊंगा और सब हाल सच-सच कह दूंगा ।

"हिज हाइनेस" उपन्यास के हिज हाइनेस और माणिक सरदार भाई हैं । परंतु माणिक सरदार राज्य का सच्चा हकदार स्वयं को मानते हैं , अतः वे हिज हाइनेस के जानी दुश्मन हो जाते हैं और उनके खिलाफ़ कोई-न-कोई षड्यन्त्र चलाते रहते हैं । एक स्थान पर वे कहते हैं --" मेरे दिमाग में प्रत्येक समय राजगद्दी का सुख-स्वप्न घूमता रहता था । मैं महसूस करता था कि गद्दी का वास्तविक मालिक मैं ही हूं और मेरा हक अन्यायपूर्वक छीना जा रहा है और अगर मुझमें हिम्मत है , गैरत है , ताकत है तो मुझे इस अन्याय का बदला लेना ही चाहिए । " [11] इस प्रकार यहां वैमनस्य का कारण राज्य है ।

ॠॠॠ (आ) सामाजिक समस्याएँ :

रूढ़ि, परंपरा या व्यवस्था के कारण सामाजिक जीवन में जो गुत्थियाँ ॠॠ× पैदा होती हैं, उन्हें हम सामाजिक समस्याओं के अन्तर्गत रख सकते हैं, यथा — दहेज की समस्या, विधवा-समस्या, वेश्या-समस्या, अनमेल ब्याह या वृद्ध विवाह की समस्या, अस्पृश्यता की समस्या, अवैध-संबंध और यौन-शोषण की समस्या आदि आदि ।

दहेज-प्रथा एक भयंकर सामाजिक कुप्रथा है, जो हमारे सामाजिक जीवन में, विशेषतः मध्यवर्गीय लोगों के जीवन में एक अभिशाप बनी हुई है और शिक्षित-वर्ग भी उससे बरी नहीं है । जैसे-जैसे समय गुजर रहा है यह समस्या और भी गंभीर रूप धारण कर रही है । दहेज में मनोवांछित चीज़-वस्तुओं या रकम के न मिलने पर लड़की को अमानुषी ढंग से सताया जाता है । रिश्वत और भ्रष्टाचार की समस्या भी इससे जुड़ी हुई है । "सेवासदन" के दारोगा कृष्णचन्द्र विवेकी तथा सच्चरित्र हैं, किन्तु अपन बेटी सुमन के लिए दहेज जुटाने के लिए उन्हें न चाहते हुए भी रिश्वत लेनी पड़ती है । अनभ्यस्त दारोगाजी पकड़े जाते हैं और दहेज के अभाव में सुमन गजाधर जैसे अपात्र के गले मढ़ दी जाती है, जिसके कारण अन्ततः उसे वेश्या होना पड़ता है । अतः यहाँ वेश्या-समस्या दहेज-समस्या से अनुस्यूत हो गई है । "निर्मला" उपन्यास में दहेज-प्रथा ने अनमेल-विवाह का रूप धारण कर लिया है ।ॠषभचरण जैन के उपन्यास ॠ "भाग्य" में दहेज-प्रथा के कारण कुमारी का विवाह उसकी माँ के लिए जटिल समस्या बन गया है । वह इतनी निर्धन है कि अपनी पुत्री का विवाह योग्य पात्र के साथ करने में असमर्थ है । फलतः वह निरंतर चिंता की अग्नि में जलती रहती है । कुमारी मनन, चिंतन, सेवा और त्याग को ही अपना जीवन बना लेती है । वह भाग्य को ही सर्वोपरि समझने लगी है । उपन्यास में लेखक ने भाग्यवाद की विजय घोषित करने के लिए अन्ततः उसका विवाह नकुल

से होजाता है , परंतु यह कोई उपयुक्त समाधान नहीं है । सबका भाग्य कुमारी-सा ज्वलंत×नहीं ज्वलंत नहीं भी हो सकता । दहेज-प्रथा के कारण अनगिनत कन्याओं का जीवन नष्ट हुआ है , हो रहा है और होता रहेगा । भाग्य के भरोसे इस समस्या को सुलझाया नहीं जा सकता । "जनानी सवारियां" , "मयखाना" , "हिज हाइनेस" , "तीन इक्के" प्रभृति उपन्यासों में जो वेश्या-समस्या मिलती है , उसका उत्स भी यहां है । "जनानी सवारियां" उपन्यास के "ठिकाने" नामक प्रकरण में बुर्दाफरोश रामजी को अपने व्यवसाय के लिए कहां-कहां से अभागिन लड़कियां मिलती हैं और उन्हें तरह-तरह के सब्ज़-बाग दिखा-कर उन्हें कैसे नरक-कुण्ड के हवाले की जाती हैं उसका ब्यौरेवार चित्रण है । एक कुटनी-सी बुढ़िया एक बगभगत-से साधु-महाराज के पास एक युवती को ले जाती है -- " महाराज , यह बेचारी बहुत दुखिया है । ... इसके पति बुड्ढे हैं और दमे के आरजे से बेदम रहते हैं । इस हालत में इस बेचारी का जीवन भार-रूप बन रहा है । इसे किसी प्रकार इस संकट से छुटकारा दिलाने की कोशिश करें । "[12] और वह बगभगत महाराज इस युवती को अपने चेले धनराज के हवाले कर देते हैं , यह कहते हुए कि इसके उद्धार की जिम्मेदारी वे उसे सौंपते हैं । कहना न होगा कि रामजी ही यहां धनराज बना हुआ है । यहां भी इस युवती की दुर्गति के लिए दहेज-प्रथा ही जवाबदेह है । "स्वर्ग की देवी" कहानी की मेमो को उसका बाप बंसीलाल के हाथों बेच देता है , उसके पीछे भी दहेज की असमर्थता ही कारणभूत है ।

विधवा-समस्या भी भारतीय समाज पर फूटा हुआ एक कोढ़ है । अब विधवा-विवाह होने लगे हैं , पर ऋषभजी के समय में यह एक ताती समस्या थी । यह समस्या अनमेल-ब्याह तथा दहेज से भी जुड़ी हुई है । दहेज के अभाव में लड़की का ब्याह बुड्ढे-ठुड्डों से करवाकर मां-बाप अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं । लड़की बेचारी फिर उस दोजख की आग में जलकर जलती रहती है । वृद्ध-विवाह के कारण वे जल्दी विधवा भी हो जाती हैं । नागार्जुन के उपन्यास में इन

विधवाओं के अस्तित्व को लेकर ही लेखक ने यह संकेतित किया है कि समाज के प्रौढ़ , बुड्ढे , विधुर , लंपट लोग नहीं चाहते कि विधवाओं का विवाह हो ; क्योंकि अन्यथा उन्हें अपनी हवस-पूर्ति के लिए शिकार कहां से मिलेगा ।[13] नागार्जुन के ही उपन्यास "रतिनाथ की चाची" में जेठ ही अपने छोटे भाई की विधवा पर हाथ साफ़ करते हैं । रामदरश मिश्र के उपन्यास "सूखता हुआ तालाब " में कामरेड मोतीलाल भी अपने छोटेभाई की बहू×क्के×भभ विधवा बहू को गर्भवती बना देते हैं । ऋषभजी के उपन्यास "तपोभूमि" में विधवा धरिणी की दुर्गति के लिए उसके जेठ ही जिम्मेदार है । "जनानी सवारियां" में ऐसी एक बाल-विधवा का जिक्र आया है — " अनार उसका नाम है । यहां से पांच सौ कोस दूर एक कस्बे की यह बेटी है । शादी इसकी आठ बरस की उम्र में हुई थी , लेकिन पति-देवता बचपन में ही चल दिये । पांच-छः बरस छाती पर पत्थर रखकर उसने रंडापा काटा , लेकिन एक दिन एक दूत की नजर पड़ गई और उसे पुनर्विवाह करा देने का लालच देकर उभार लिया गया । "[14] "रहस्यमयी" उपन्यास की सुखवतीदेवी भी सुंदर विधवाओं को अपने जाल में फांसकर उसका अपने हित में प्रयोग करती है ।

अनमेल ब्याह , वृद्ध-विवाह तथा वेश्या-समस्या परस्पर अन्तर्ग्रथित हैं यह ऊपर के कई उदाहरणों से स्पष्ट होता है । "जनानी सवारियां" उपन्यास तो सम्पूर्णतया इस समस्या को लेकर लिखा गया हो ऐसा प्रतीत होता है । "तीन इक्के" , "मयखाना" , "हिज हाइनेस" , "हर हाइनेस" , "रहस्यमयी" , "दिल्ली का व्यभिचार" प्रभृति अनेक उपन्यासों में तथा "नन्दू और रण्डी" जैसे×कहा×नियों× "रखैल" तथा "पांच रूपये का कर्ज " और "सुधार की खोज" जैसी कहानियों में लेखक ने वेश्या-समस्या का निरूपण किया है । वस्तुतः कोई भी स्त्री वेश्या बनना चाहती नहीं है , परन्तु परिस्थितियां और समाज की व्यवस्था उसे उस नरक में धकेलती हैं ।

अछूत की समस्या भारतीय समाज में क्षय रोग की भांति उसे जर्जरित कर रही है । अछूतपन का यह कोढ़ हमारे समाज का नासूर है । महात्मा ज्योतिबा फूले , महात्मा गांधी , डा. बाबासाहेब आंबेडकर तथा हमारे संविधान के नये कानूनों के कारण अब यह समस्या थोड़ी कम हुई है , परंतु उसका सर्वथा नाश तो अब भी नहीं हुआ है । आलोच्य लेखक के काल में तो यह समस्या हमारे समाज की एक प्रमुख समस्या है थी । स्वामी विवेकानंद ने इसी परिस्थिति से खिझकर खीझकर कहा था कि " हमारा धर्म रसोईघर में है और हमारा ईश्वर खाना बनाने के बर्तन में हैं -- हमारा सिद्धान्त है मुझे न छूओ , मैं पवित्र हूं । " [15]

ब्रिटिश शासन के प्रारंभ में नीच जातियों के करोड़ों हिन्दू अछूत माने जाते थे और उनके साथ असह्य , अकथनीय और अमानवीय अत्याचार होते थे । दक्षिण में यह प्रथा अपने उग्रतम रूप में थी । वहां तो उच्च जातियों के लोग अछूतों के स्पर्श से ही नहीं , बल्कि उनकी परछाईं तक से अपवित्र हो जाते थे । दक्षिण के कुछ नगरों में प्रातः नौ-दश बजे तक और शाम को तीन-चार बजे के बाद अछूतों का नगर में प्रवेश वर्जित था , क्योंकि उस समय परछाइयां लम्बी होती हैं ।[16] "कोचीन की सरकारी रिपोर्ट के अनुसार ब्राह्मण नायर के स्पर्श से दूषित समझे जाते थे किंतु कम्मलन (राज , बढ़ई , लुहार , चमार) ब्राह्मणों को 24 फीट की दूरी से अपवित्र कर देता था , ताड़ी निकालनेवाला 36 फीट से , चेरूमत कृषक 48 फीट से और परेमन (गोमांस-भक्षक परिहा) 64 फीट से । यह संतोष की बात थी कि इससे पुरानी [illegible] रिपोर्टों " में परिहा 72 फीट की दूरी से अपवित्र करने वाला माना गया है । अभागे अछूत शहरों से बाहर रहते थे , मंदिरों में इनका प्रवेश वर्जित था , क्योंकि सब भक्तों का उद्धार करने वाले देवता भी इनके दर्शन से दूषित हो जाते थे । ये कुओं से पानी नहीं भर सकते थे , अस्पतालों और पाठशालाओं का लाभ नहीं उठा सकते थे । वे उच्चवर्ग के बेगार आदि के अत्याचार सहते

हुए बड़े दुःख से अपने नारकीय जीवन की घड़ियाँ गिनते थे । "[17] कहने का तात्पर्य यह कि यह समस्या भारतीय संस्कृति पर पड़े एक धब्बे या कलंक के समान थी ।

ऋषभजी के उपन्यासों में इस समस्या की प्रत्यक्ष चर्चा कम है , किन्तु उनके उपन्यास में "सत्याग्रह " में यह ध्वनित हुआ है कि गांधीजी को अस्पृश्यता-निवारण की प्रेरणा अपने दक्षिण-अफ्रिका के प्रवास से मिली है । वहाँ गोरों ने उनके साथ जो अमानवीय व्यवहार किया , उन्हें अस्पृश्य-सा समझा , उनके बाल काटने के लिए मना कर दिया , इन सबसे गांधीजी को अपने देश में बसे उन करोड़ों लोगों की पीड़ा का अहसास हुआ जिनके साथ भी हमारे देश के उच्च वर्णों के लोग ऐसा ही , बल्कि इससे भी गया-गुजरा व्यवहार कर रहे थे ।[18] "कौड़ियों का हार" कहानी में चुन्नी और धपिया के साथ जो हीन व्यवहार होता है , उसके पीछे यही अस्पृश्यता की भावना है , क्योंकि ये दोनों भाई-बहन भंगी जाति के हैं जो अस्पृश्यों में भी अधिक हीन जाति के माने जाते हैं ।

अवैध यौन-संबंधों की चर्चा प्रायः उनके सभी उपन्यासों में देखी जा सकती है । "हिज हाइनेस" , "हर हाइनेस " , "मयखाना", "तीन इक्के" , "जनानी सवारियाँ " , "तपोभूमि" , "मन्दिर-दीप" , "रहस्यमयी" , "दिल्ली का व्यभिचार" प्रभृति सभी उपन्यासों में अवैध यौन संबंधों की चर्चा मिलती है । "हिज हाइनेस" के महाराजा को अनेक नग्न स्त्रियों के साथ विहार करने का शौक है । उनको हमेशा नयी-नयी लड़कियाँ चाहिए । उसके लिए उन्होंने मानो एक विभाग ही खोल रखा है । " मैं कहीं रहूं , राजधानी में या बम्बई, पूना, मद्रास, कलकत्ता, दिल्ली -- गर्जेकि जब कभी जहाँ जाता हूँ , ये सारे लोग हमेशा मेरे साथ रहते हैं । और इनका काम महज़ यह रहता है कि यह मेरी शाम का बढ़िया-से-बढ़िया इन्तज़ाम करने की फ़िक्र में धूल फांकते फिरें । मुल्क के बड़े-बड़े शहरों की बड़ी-बड़ी रण्डियों , उनके बड़े-बड़े दलालों , शहर भर की बढ़िया-बढ़िया

खानगियों और लावारिस खूबरूओं से इन लोगों का परिचय रहा है और होता रहता है । हरेक नये-से-नये माल की खबर इन लोगों को रहती है । जहां, जब कभी मेरी सवारी जाती है, इन्हीं महापुरूषों की बदौलत मुझे हरेक शामको नई शराब की बोतलों का साथ देने के लिए नई-नई और जीती-जागती शराब की बोतलें भी चखने को मिल जाती है । ... कुछ बेचारे जो गरीब थे, बेवकूफ थे और बाहर की औरतों का इन्तज़ाम नहीं कर सकते थे, उन्होंने धीरे-धीरे अपनी सगी-संबंधियों, बहनों, बेटियों, भतीजियों, भांजियों, सालियों, सरहजों और खुद अपनी बीबियों तक को मेरे सामने पेश करना शुरू कर दिया । "[19] ऐसे अवैध संबंधों और यौन-शोषण से समाज के स्वास्थ्य पर असर पड़ता है । "मन्दिर-दीप" उपन्यास का नागरदास चालीस साल का होते हुए भी कालेज इसीलिए जाता है कि उसके जरिये नयी-नयी लड़कियों को फांसा जाय । उपन्यास के अन्त-भाग में वह रानी को कहता है — " देखो रानी, मैं शोहदा नहीं, लुच्चा हूं । न मुझे औरतों की कमी है । लेकिन तुमने मेरे अभिमान को "चैलेंज" दिया है और तुम्हें मैं इस गुस्ताखी की सज़ा जरूर ही दूंगा । "[20]

(ङ) आर्थिक समस्याएं :

मनुष्य की बहुत-सी समस्याओं का मूल आर्थिक होता है । जहां संपन्नता होती है, वहां हर समस्या का कोई-न-कोई हल जरूर होता है, या कहिए हर समस्या के आगे कोई राह होती है ; परंतु जहां विपन्नता होती हैं, वहां हर राह के आगे कोई-न-कोई समस्या मुंहबाये खड़ी मिलती है । दरिद्रता में यार, दोस्त, सगे-संबंधी भी मुंह फेर लेते हैं । "दुनियादारी" के बड़े भाईसाहब ने कपड़े के सट्टे में लाखों रूपये कमाये थे और उनके कारण पूरा घर ऐश कर रहा था, परंतु जब व्यापार में घाटा गया तब सब लोग उनसे कतराने लगे । यहां तक कि जिस कमलाकर को उन्होंने एल.एल.बी करवाया, वह भी उनकी उपेक्षा करने लगा । इतना ही नहीं, उनकी पत्नी को भी परिवार के दूसरे सदस्य

अपमानित करने लगे । यही कारण है कि दुकान का काम राह पर लाने के पश्चात् वे कमलाकर को कहते हैं — "जीता रहूंगा तो आ मिलूंगा, अपनी भाभी का ख़याल रखना ।" [21] "स्वर्ग की देवी कहानी में गरीबी के कारण ही मेमो का पिता मेमो को बंसीलाल के हाथों बेच देता है । जहां दरिद्रता होती है, वहां गंदगी भी होती है । दरिद्रता और गंदगी का चोली-दामन का साथ है । "कौड़ियों का हार" कहानी में चुन्नी और धपिया भंगी जाति के हैं । उनकी गंदगी के पीछे उनकी दरिद्रता और दीन-हीन अवस्था ही कारणभूत है । इस दरिद्रता के कारण उनका यौवन भी जल्दी ही ढल जाता है । जगदीश-चन्द्र के उपन्यास "धरती धन न अपना" का छज्जू शाह तभी तो कहता है कि — "चमार की ख़ुशहाली भी उसकी जवानी की तरह चार दिन की होती है ।" [22] "रखैल" कहानी की चमेली को नन्दू के आगे अपनी दरिद्रता के कारण ही आत्म-समर्पण करना पड़ता है । "इतनी देर में नन्दू सारी असलियत जान गया था । पुरुष का नाम था रामप्रसाद और स्त्री का चमेली । बचपन में विधवा हो गई, और दो बरस से रामप्रसाद के साथ है । रामप्रसाद पहले रेलवे में मुलाजिम था और अब कई महीने से बेकार है ।" [23]

"जनानी सवारियां", "रहस्यमयी", "मयखाना", "चम्पाकली" जैसे उपन्यासों में वेश्याओं की जो समस्याएं निरूपित हुई हैं, उनके मूल में भी आर्थिक कारण ही हैं । "हिज हाइनेस" में ऐसी अनेक विवश लाचार औरतों के ज़िक्र आए हैं, जिनको अपनी गरीबी के कारण अपनी इज्जत-अस्मत का सौदा करना पड़ा है । "भाग्य" की नायिका कुमारी को दरिद्रता के कारण दर-दर की ठोकरें खानी पड़ती हैं । उसकी मां भी उसे लेकर हमेशा चिंतित रहती है, क्योंकि गरीबी के कारण उसका दहेज नहीं जुटा सकती । दरिद्रता के कारण ही बहुत से मांबाप अपने कलेजे के टुकड़ों सी बेटियों का ब्याह दुहाजू-तिहाजू बुड्ढे-ठुड्डे लोगों से करने के लिए विवश हो जाते हैं । इसके कारण ही आगे चलकर वेश्या-समस्या का निर्माण होता है ।

स्थिति की यह भी कैसी विडंबना है कि गरीब को न्याय पाने के लिए भी अपना सबकुछ दांव पर लगा देना पड़ता है और फिर भी न्याय उससे कोसों दूर ही रहता है ।×सं संपन्न व्यक्ति न्याय को भी खरीद लेता है , गवाहों को खरीद लेता है , पुलिस को खरीद लेता है । "भाई" उपन्यास के रामसनेही की पत्नी अपने निर्दोष पति को बचाने के लिए अपने सब गहनों को बेचकर वकील का प्रबन्ध करती है , पर फिर भी बचा नहीं पाती है , क्योंकि वह गरीब है । वह वकील तो कर सकती है , पर गवाहों को तो नहीं खरीद सकती ।

"सत्याग्रह" उपन्यास में लेखक ने गिरमिटिया मजदूरों की दरिद्र अवस्था का चित्रण किया है । अन्यायी गोरी सरकार ने उन पर जो टेक्स डाला है , उसे भरने के लिए उन्हें अपना तथा अपने बीबी-बच्चों का पेट ही नहीं काटना पड़ता , उनकी इज्जत भी गिरवी रखनी पड़ती है । एक स्थान पर गांधीजी खानों के गोरे मालिक के सम्मुख कहते हैं -- "मगर भारतीयों की स्थिति से जितना मैं परिचित हूं उतने आप नहीं । उस तीन पौंड के कर की अदायगी के लिए कितनी स्त्रियों को व्यभिचार करना पड़ता है , कितने बच्चे होते ही मार दिए जाते हैं , और किस प्रकार पेट काटकर तीन पौंड जमा करना पड़ता है , यह आप कैसे समझ सकते हैं ? " [24]

(ई) वैयक्तिक या मनोवैज्ञानिक समस्याएं :

यद्यपि ऋषभजी जिस काल-खण्ड में अपने कथा-साहित्य की सर्जना कर रहे थे उस युग-विशेष पर प्रेमचन्द का सविशेष प्रभाव परिलक्षित होता है और उसमें मूलतः सामाजिक सुधारवादी समस्यामूलक उपन्यास और कहानियों का प्रणयन होता है रहा है तथा व्यक्तिवादी चेतना का स्वर बाद में जैनेन्द्र आदि द्वारा अभिसृत्रित हुआ है तथापि आलोच्य लेखक में कहीं-कहीं यह व्यक्तिवादी चेतना के बीज अंकुरित होते हुए दृष्टिगोचर हो रहे हैं । "संयोग" , "रखेल"

"दुनियादारी", "निग्रह", "अंधी दुनिया" प्रभृति कहानियां तथा "मन्दिर-दीप", "तपोभूमि", "हिज हाइनेस", "तीन इक्के", "मय-खाना" जैसे उपन्यासों में कई पात्रों और घटनाओं के अन्तर्गत हम इस व्यक्तिवादी चेतना से अन्तर्ग्रथित मनोवैज्ञानिक गुत्थियों को पा सकते हैं ।

"दान" कहानी के हुकूमतराय में यशोलिप्सा की भावना बलवत्तर है । "रायसाहब" से "रायबहादुर" होने के लिए वे सभी प्रकार के पापड़ बेलने को उद्यत दिखते हैं । ये खिताब उस जमाने में "स्टेटस-सिम्बोल" से बन गए थे और उनकी प्राप्ति के लिए लोग हजारों रूपये फूंक देते थे, क्योंकि इनके द्वारा उनका "ईगो" संतुष्ठ होता था ।

"संयोग" कहानी के ब्रजमोहन को सुंदरता के प्रति आकर्षण है और उसमें विपरीत-लिंगी व्यक्ति के प्रति आकर्षण का भाव भी है, परंतु उसके इन भावों पर गांधीवादी आदर्शवाद का मुलम्मा चढ़ा हुआ है । फलतः वह शादी करना नहीं चाहता । ~~प्रसंग~~ परंतु प्रतिभा का सौन्दर्य उसकी अंतश्चेतना पर बुरी तरह से हावी हो जाता है । तब उसका "ईगो" सुधारवादी चेतना को आगे धर विवाह के लिए तत्पर हो जाता है । एक लड़की के उद्धार की बात उसके पुरुष अहं को संतुष्ट करने के लिए पर्याप्त है । यही बात "सुधार की खोज" के सुधाकर तथा "निग्रह" के रामदेव पर लागू होती है । "अंधी दुनिया" कहानी में काशीनाथ की मां की जो समस्याएं हैं, वह भी आर्थिक-सामाजिक कम, मनोवैज्ञानिक ज्यादा हैं । अन्यथा काशीनाथ पूरा खर्च देने को तैयार था, बुढ़िया अलग भी रह सकती ~~है~~ थी । परंतु जवानी में पति की मृत्यु हो जाने से वह स्वयं को बहुत "इनसिक्योर" समझती है । ऐसी स्त्रियां अपने बेटों पर अधिकार चाहती हैं । बेटा बहू को ज्यादा प्यार करे यह भी उनके बरदाश्त के बाहर की चीज़ होती है । प्रेमाभाव ऐसे लोगों को सैडिस्ट बना देता है । काशीनाथ की मां भी एक "सैडि-स्ट" औरत है ।

यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि जब कोई अलश्रधश्र असाधारण सुंदरी व बुद्धिमती स्त्री का विवाह किसी साधारण पुरुष से होता है तो उसके पथभ्रष्ट होने की अधिक संभावनाएं होती हैं । "सेवासदन" की सुमन तथा "रहस्यमयी" की सुखवतीदेवी इसके उदाहरण हैं । सुखवतीदेवी को यदि उसके अनुरूप पति मिला होता तो शायद उसके जीवन की धारा कुछ और ही दिशा में बहती । उसकी उद्दाम काम-वासना को संतुष्ट कर सके ऐसा पुरुष उसे नहीं मिलता , परिणामतः वह पतन के गर्त में गिरती ही जाती है । पति की हत्या करवा देती है । बुद्धिमता और सौन्दर्य और उद्दाम काम-वासना , फलतः वह "निम्फो" हो जाती है । अपनी इस वासना-तृप्ति के लिए वह "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई" (शैलेश मटियानी) की सेठानी नर्मदाबेन की भांति समाज-सेविका का स्वांग भरकर नित्य-नवीन शिकारों को फांसती रहती है । उपन्यास का एक पात्र प्रेमशंकर उसके विषय में कहता है -- " यह शैतान की नानी एक शख्स तो क्या , शायद एक दर्जन पति रखकर भी संतुष्ट नहीं हो सकती । नित्य नये फूलों को तोड़ना , सूंघना और फेंक कर पैरों तले कुचल डालना , यही इस भयानक रमणी का काम है । " 25

"हिज हाइनेस" उपन्यास के महाराजा की समस्याएं भी मानसिक अधिक लगती हैं । उन्हें अपने मंत्री , सरदार , मां-महारानी, पत्नी-रानी त्रिपुरी किसी पर विश्वास नहीं है । फलतः वे भी अपने चापलूसों से घिरे रहते हैं । सुखवतीदेवी की भांति उनमें भी काम-वासना की अतिरेकता पाई जाती है । यह भी एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि रात-दिन अनेक प्रकार के षडयन्त्रों से भयग्रस्त रहने वाला व्यक्ति शराब और सुंदरी में अपनी मुक्ति खोजता है । ऐसी अति काम-वासना से पीड़ित लोगों को "इरोटोमेनिक" कहते हैं । यह "निम्फो" का विपरीत लिंग है । काम-वासना की विपुलता स्त्री को "निम्फो" और पुरुष को "इरोटोमेनिक" बना देती है । हिज हाइनेस की वासना का चित्रण इस प्रकार हुआ है -- " हर रोज मेरे पास नई-से-नई और बढ़िया-

से-बढ़िया औरतें एक-दो नहीं , दर्जनों की संख्या में आने लगीं । कुछको छेड़ता , कुछको काटता , कुछको भोगता और कुछको बखेरता । कुछ मेरे खुशनसीब नौकरों के काम आती थीं । ... लेकिन इन सबमें बहुत थोड़ी ऐसी सौभाग्यशालियां थीं , जिनको एक बार से अधिक मेरी अंकशायिनी बनने का सौभाग्य मिला हो । इसीमें तो मेरा बड़प्पन था । सभी प्रांतों और सभी जातियों से मेरा वास्ता पड़ा , लेकिन मेरठ की पहाड़िनों ~~के~~ के अतिरिक्त न तो पूना की मरहठिनें मेरे मन को भाइं , न दिल्ली की मुसलमानीनें , बम्बई की गुजरातिनों से तो मुझे नफरत-सी हो गई थी । और एंग्लोइंडियान छोकरियों के मुताल्लिक यह संस्कार मेरे हृदय पर जड़ जमा चुका था कि वे बीमारी का घर हैं । " 26

"तपोभूमि" उपन्यास तो मनोवैज्ञानिक उपन्यास ही है । उसकी धरिणी का चरित्र "त्यागपत्र" की मृणाल जैसा है । मनोवैज्ञानिक-दृष्टया ऐसे पात्रों को आत्म-पीड़क ॥मैसोइस्ट॥ कहते हैं । इन लोगों की समस्या यह होती है कि वे स्वयं पीड़ा भुगतते रहते हैं । ~~धरिणी~~ धरिणी चाहती तो उसे गर्भवती बनाने वाले उसके जेठ के करतूतों को बेपर्द कर सकती थी , परंतु वह अपने होठों पर किसीका नाम तक नहीं लाती है । वह एक स्थान पर कहती है -- " मैं दूषिता हूं । क्या उसके प्रकट हो जाने पर मेरा लांछन कम हो जायेगा । क्योंकि इस तरह मैं , जिसे वह अपनी आबरू समझता है -- उसे दुनिया की मौज के महफिल में पीकदान की जगह जा बिछाऊंगी और अब यदि उसमें जरा भी सहृदयता होगी , वह मुझे इज्जत से देखेगा । जानेगा विशाल-हृदयता किसे कहते हैं , क्षमा और उदारता किसे कहते हैं ।" 27

सतीश और शशि के दाम्पत्य-जीवन की जो समस्याएं हैं वे मनोवैज्ञानिक हैं । सतीश में पुरुष की अहम्मन्यता और "ईगो" है । वह शशि पर अपना अधिकार मानता है । शशि नवीन को चाहती थी । उसका अचेतन मन कदाचित् अभी भी उसे ही चाहता है । फलतः

उसमें उसमें एक गजब का तटस्थ "ठण्डापन" मिलता है । ऐसी स्थिति में सतीश उसे अपने प्यार से जीत सकता था , पर वह तो हमेशा पुरुष अधिकार की बात करता है । उपन्यास में नवलराय एक स्थान पर कहते हैं-- "गृहस्थी तपस्या का स्थान है । स्त्री और पुरुष के में बराबर का बंटवारा किया गया है । दोनों का हिस्सा ज़रा भी कम-ज्यादा नहीं । प्राचीन हिन्दू-संस्कृति की सामाजिक व्यवस्था सर्वथा शुद्ध , सत्य और युक्ति-संगत थी । ऐतिहासिक घटना-चक्र में पड़कर इस व्यवस्था का पतन आरंभ हुआ । आज हमारे जो संस्कार हैं कुछ-सौ वर्ष पहले के इतिहास में इनका इनका अभाव पाओगे । पुरुष ने स्त्री पर अपने जिस और जैसे अधिकार की कल्पना कर रखी है , मेरी बुद्धि किसी प्रकार भी उसे तर्क-युक्त और न्याय-युक्त स्वीकार नहीं करती । " 28

सतीश नवलराय को पूछता है कि यदि कोई पुरुष अपनी स्त्री में चरित्र-दोष देखें तो उसका क्या कर्तव्य है ? इसके जवाब में नवलराय कहते हैं -- " दुनिया ने जिस चीज को चरित्र समझा है , मैं उसीको चरित्र नहीं समझता । चरित्र का एक अंश उसे कहा जा सकता है , पर मेरी समझ में वह बहुत क्षुद्र वस्तु है । .... तुम इतने उदार क्यों नहीं बन सकते ? स्त्री के दिल पर अधिकार करो , वह इधर-उधर चले जाने की कल्पना भी न करे .... यह पहली बात है । इसमें अगर तुम अक्षम रहे तो मेरी राय है ... दोनों दिलों को अपनी-अपनी राह चलने दो । जरूरत यह है , कि तुम दिल के किसी खास तरफ़ चले जाने को ही सबकुछ न समझ बैठो । पुरुष अगर इतना विचारशील हो जाय , तो तपोभूमि का सारा उपद्रव लुप्त हो जाय । " 29

{ङ} इतर समस्याएं :

राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं को यहां हम ले सकते हैं । "हिज हाइनेस" , "हर हाइनेस" , "गदर" तथा "सत्याग्रह" जैसे उपन्यासों में हमें राजनीतिक समस्याओं का कुछ निरूपण मिलता

है । धर्म तो समस्याओं को सुलझाता है , अतः वस्तुतः धxxर्मिक धx समस्याएं धार्मिक होती ही नहीं है । वह तो धर्म को उसके सही स्वरूप में न समझ पाने के कारण होता है । वही बात शिक्षा और संस्कृति के विषय में भी कह सकते हैं ।

"हिज हाइनेस" तथा "हर हाइनेस" जैसे उपन्यासों में हम देखते हैं कि किस प्रकार अंग्रेजों ने अपनी स्वार्थ-पूर्ति के लिए देशी नरेशों को विलासिता के दरिया में डूबो दिया है । "हिज हाइनेस" उपन्यास में लेखक देशी-नरेशों केxलxxदर्भx सन्दर्भ में कहते हैं -- " अधिकार, पूंजी, आराम और अxशिक्षाअशिक्षा के सम्मिश्रण से जो चीज पैदा होती है , और जिसका उल्लेख सोलहवीं सदी के फ्रान्स , उन्नीसवीं सदी के इंग्लैंड और बीसवीं सदी के अमेरिका के इतिहास में मिलता है , हमारे देशी नरेश उन्हीं के मिलते-जुलते रूप हैं । इन लोगों में उक्त चारों महादोषों के अतिरिक्त एक और महादोष मिला हुआ है -- गुलामी । "[30]

अंग्रेज नहीं चाहते थे कि इन देशी नरेशों के राज्य में सुराज्य की व्यवस्था हो । वे तो इन लोगों को सुरा-सुन्दरी में डूबोकर अपना उल्लू सीधा करना चाहते थे । इस प्रकार प्रजा का दोहरा शोषण हो रहा था । एक स्थान पर हिज हाइनेस अपने बारे में बताते हैं -- "मेरे सामने मेरे लाखों प्रजाजन , मेरे हजारों फौजी सिपाही और जंगी सरदार, मेरे सैंकड़ों नौकर-चाकर झुक-झुक जाते और बल-बल खाते हैं । मैं चाहूं तो क्षणभर में उनका कत्ले-आम करा डालूं , उनके घरों में आग लगा दूं , उनकी बहू-बेटियों-बहनों पर कुत्ते छुड़वा दूं , उनके बच्चों को जीता जमीन में गड़वा दूं । कोई चूं नहीं कर सकता । किसीको मेरे इस काम में बाधा देने का हक नहीं है । लेकिन मैं राजा हूं और बड़ा रहम-दिल हूं , बड़ा गरीब-निवाज़ , बड़ा प्रजा-पालक । मैं उनसे कहता हूं , तुम जियो , खेलो , खुश रहो , और मैं जो कुछ , जिस तरह करूं मुझे वही , उसी तरह करने दो । मेरे रास्ते में बाधा मत दो । मेरे कार्य-कलाप की टीका-टिप्पणी मत करो । मैं बड़ा बुद्धिमान हूं -- साक्षात् ईश्वर हूं , उसका अवतार हूं । मैं जो कुछ करता हूं , ईश्वर की प्रेरणा से करता

हूं -- महज़ लीलायें रचता हूं । मुझे यह सबकुछ करने का अधिकार है ।" [31]
इससे ब्रिटिश समय में देशी नरेश कितने आपखुद थे इसका पता चलता है । परंतु ये देशी नरेश जो अपनी प्रजा के सम्मुख शेर-बब्बर की तरह दहाड़ते थे , अंग्रेज वाइसरोय या लाट-साहब के आगे भिगी बिल्ली बन जाते थे । अंग्रेज रेसिडेण्ट को खुश रखने के लिए ये तरह-तरह के पैंतरे रचते थे । "गदर" उपन्यास में लेखक ने भलीभांति बताया है कि अंग्रेज हाकिमों को खुश करने के लिए नानासाहब कैसे ~~उनके~~ उनको खिलाते-पिलाते थे , उनकी कितनी और कैसी खुशामद करते थे । "सत्याग्रह" उपन्यास में लेखक ने स्वाधीनता-संग्राम में महात्मा गांधी की जो भूमिका रही है , उसकी पार्श्वभू को प्रस्तुत किया है ।

"स्वर्ग की देवी" कहानी में लेखक ने यह बखूबी व्यंजित किया है कि कांग्रेस-कल्चर में आगे कैसे-कैसे लोग देश के कर्णधार होने वाले हैं । बंसीलाल जैसे चरित्रहीन लोग शहर-कांग्रेस कमेटी के चेयरमैन है ।

लेखक ने अनेक स्थानों पर धर्म के "छद्म-रूपों" की आलोचना की है । "मन्दिर-दीप" उपन्यास में एक भ्रष्ट साधुबाबा का चित्रण हुआ है । "तपोभूमि" का सुंदरलाल प्रकट रूप से तो नित्यप्रति पूजा-पाठ , प्रार्थना-ध्यान आदि करता है , परंतु वह कैसा बगला भगत है , वह तो उसके इस आचरण से प्रमाणित होता है कि अपने ही छोटे भाई की पत्नी से वह शारीरिक-संबंध बांधता है । "जनानी-सवारियां" में बुर्दाफरोश रामजी को जिन-जिन ठिकानों से "माल" मिलते हैं , उनमें मन्दिर और मठ भी शामिल हैं । "रहस्यमयी" उपन्यास की सुखवतीदेवी के माध्यम से लेखक ने यह व्यंजित किया है कि हमारा सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन कितना सड़ा हुआ है और धर्म और संस्कृति के नाम पर हम लोगों को कैसे-कैसे गुल खिलाते हैं । शैक्षिक-क्षेत्र की समस्याओं में लेखक ने मुख्यतया यह बताया है कि प्रवर्तमान ~~शि~~ शिक्षा-पद्धति हमारे देश के युवकों को पथभ्रष्ट कर रही है , उन्हें मानसिक रूप से गुलाम बना रही है । यह बाबुओं को पैदा करने वाली शिक्षा है । इस शिक्षा से हमारी मानसिकता संकुचित , पंगु और गुलाम होती जायेगी ।

लेखक समाज का मुख और मस्तिष्क दोनों है । अतः अपने साहित्य के द्वारा वह समाज के प्राण-प्रश्नों को पाठकों के सम्मुख बेहिचक रखता ह है । यही उसका लेखक धर्म है । ऋषभजी का समय प्रेमचन्द-युग का समय है । उसके पहले नव-जागरण की चेतना प्रवर्तमान थी , अतः उसका प्रभाव उस काल के प्रायः सभी लेखकों पर देखा जा सकता है । उपर्युक्त विवेचन में हमने देखा कि ऋषभजी ने भी अपना यह लेखक-धर्म यथेष्ट रूप में बजाया है और अपने समय की नाना समस्याओं को निरूपित किया है ।

:: शिल्प ::

कथा-साहित्य में शिल्प का महत्त्व अपरिहार्य है । काव्य में जिसे भावपक्ष और कलापक्ष कहते हैं ; वही यहां वस्तु-पक्ष और शिल्प-पक्ष के रूप में आते हैं । श्रेष्ठ कथा-कृति के लिए वस्तु का श्रेष्ठ होना तो अनिवार्य है ही , परंतु उस श्रेष्ठ वस्तु की भावजत भी कलात्मक ढंग से होनी चाहिए । महत्त्व बात का ही नहीं , बात कैसे कही जाती है उसका भी है । अच्छा वस्तु , अच्छा विषय , गलत शिल्पकार के हाथों पड़ अपना प्रभाव खो भी सकता है । बरअक्स इसके वस्तु श्रे की कमतरता के रहते हुए भी कई बार कोई रचना अपनी श्रेष्ठ शिल्प-सजगता के कारण प्रभावी हो सकती है । परंतु यहां एक खतरा भी है । कई बार जीवन-विरोधी , समाज-विरोधी बात अपने श्रेष्ठतम शिल्प-सौष्ठव में आकर हमें विमोहित भी कर सकती है । बहरहाल यह तो तय है , कि उपन्यास और कहानी की गणना भी साहित्य के अन्तर्गत ही होती है , अतः उसमें कलापक्ष या शिल्प-पक्ष से सम्बद्ध बातों को विस्मृत नहीं किया जा सकता ।

उपन्यास की परिभाषा में वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करनेवाली घटनाओं और पात्रों को एक "प्लोट" के अन्तर्गत रखने की बात कही गई है[32]। कार्य-कारण श्रृंखला से बंधा हुआ कथानक ही "प्लोट" है । ई.एम. फारस्टर ने "स्टोरी" और "प्लोट" के

प्लॉट

अंतर को स्पष्ट करते हुए कहा था कि "ए किंग डाइड , एण्ड धेन द क्वीन डाइड , इज़ ए स्टोरी ; व्हाइल ए किंग डाइड एण्ड धेन द क्वीन डाइड आउट आफ ग्रीफ आर डीप सोरो इज़ ए प्लोट." [33]

उपन्यास की कथावस्तु में रोचकता और सजीवता तथा नवीनता लाने के लिए आजकल नव-नवीन शिल्प-विधियों का प्रयोग होता है , जैसे-- :1: वर्णनात्मक या ऐतिहासिक पद्धति -- "गोदान" , "झूठा सच" , भूले बिसरे चित्र " आदि इसके उदाहरण हैं । इस शिल्प-विधि का प्रयोग सर्वाधिक रूप से हुआ है । :2: आत्मकथनात्मक विधि -- इसे आत्मकथात्मक भी कहते हैं । इसमें उपन्यास का कोई पात्र अपनी कथा सुनाता है । "त्यागपत्र" , "सुबह अंधेरे पथ पर " {सुरेश सिंहा} आदि इसके उदाहरण हैं । :3: संस्मरणात्मक विधि :- इस विधि में पूरी आत्म-कथा तो नहीं होती , परंतु कोई पात्र जैसे अपने संस्मरण सुना रहा हो , उस प्रकार कथा का प्रवाह बहता है । "शेखर एक जीवनी" इस पद्धति का श्रेष्ठतम उपन्यास है । :4: पात्रात्मक विधि :- यह विधि भी आत्मकथनात्मक प्रकार की ही है , परंतु अंतर इतना है कि जहां प्रथम में केवल एक व्यक्ति अपनी कथा कहता है ; वहां इस दूसरी विधि में एकाधिक पात्र अपनी-अपनी बात करते हैं और उन सबकी बातें उपन्यास के कथापट को बुनती जाती है । नागार्जुन कृत "इमरतिया" इसका श्रेष्ठ उदाहरण है । :5: पत्रात्मक -- इस विधि में उपन्यास के प्रमुख पात्र परस्पर पत्र लिखते हैं , और उनके पत्रों के माध्यम से एक कथापट तैयार होता जाता है । उग्रजी का उपन्यास "चन्द हसीनों के खूतूत" इसका एक अच्छा उदाहरण है । इस विधि का आंशिक प्रयोग भी कई उपन्यासों में मिलता है । :6: डायरी-पद्धति -- इस विधि में उपन्यास का कोई पात्र अपनी डायरी {दैनंदिनी} या रोजनामचा लिखता है । गुजराती के कवि-कथाकार रावजी पटेल का उपन्यास "झंझा" इसका एक अच्छा उदाहरण है । जैनेन्द्र कृत "जयवर्द्धन" तथा महेन्द्र भल्ला कृत "एक पति के नोट्स " में भी इस विधि का प्रयोग मिलता है । :7: चेतन-प्रवाह शैली { स्ट्रीम आफ कोनशियसनेस } -- इस विधि में वस्तु

सिलसिलेवार नहीं आता । तंद्रावस्था , पागल का प्रलाप या स्वप्नों की तरह कभी एक बात आती है , कभी दूसरे । प्रसंगों और कथनों में भी कोई तारतम्य नहीं होता । समूचे उपन्यास को कई बार पढ़ जाने पर उसके ये विच्छिन्न सूत्रों में कोई संबंध स्थापित होता-सा दिखता है । जेम्स जायस का "युलिसीस" इसका श्रेष्ठतम उदाहरण है । प्रभाकर माचवे कृत "परन्तु" , मृदुला गर्ग कृत "चित्तकोबरा" ,जगदंबाप्रसाद दीक्षित कृत "मुरदाघर" प्रभृति उपन्यासों में कहीं-कहीं इस विधि का प्रयोग मिलता है । नागार्जुन के "इमरतिया" उपन्यास में उपन्यास के अंत भाग में भगौतीप्रसाद के अफीम के नशे के प्रभाव में किया गया प्रलाप इस कोटि में आ सकता है । इनके अतिरिक्त प्रतीकात्मक , टेलिफोनात्मक आदि और भी कई विधियां हैं । कमलेश्वर कृत "समुद्र में खोया हुआ आदमी" एक प्रतीकात्मक उपन्यास है तो सरयूप्रसाद पांडे कृत "मि. तिवारी का फोन " टेलिफोनात्मक विधि का उपन्यास है । इसमें सत्ताइस बार टेलिफोन पर बातचीत होती है और टेलिफोन पर हुई उस बातचीत के जरिये ही कथावस्तु आगे बढ़ता है । आजकल कुछ ऐसे भी उपन्यास मिलते हैं जिनमें एकाधिक शिल्प-विधियों के प्रयोग मिलते हैं । उपेन्द्रनाथ अश्क के "शहर में घूमता आईना " में कई विधियों का प्रयोग मिलता है ।[33] अज्ञेय कृत "अपने अपने अजनबी" में डायरी और पत्र यों दोनों विधियों का प्रयोग मिलता है ।[34] उपरोक्त सारी विधियां कथानक को रोचक बनाने के लिए होती हैं । एक प्रकार से लेखक यहां अपनी शैली के साथ प्रयोग करता है ।[35]

यहां यह तथ्य ध्यातव्य रहे कि उपरोक्त उदाहरणों में प्रायः प्रेमचन्दोत्तरकाल के उदाहरण हैं । प्रेमचन्दकाल तथा उसके आस-पास के कुछ वर्षों तक के समय में जिसमें हमारे आलोच्य लेखक का कृतित्व आता है , शिल्प-विधियों के इतने प्रयोग विकसित नहीं हुए थे । तथापि इस क्षेत्र में ऋषभचरण जैन का जो प्रदान है , वह

काफ़ी श्लाघनीय है जिसे हम नीचे रेखांकित करने जा रहे हैं ।

शिल्प-विधि की दृष्टि से ऋषभजी के निम्नलिखित उपन्यास उल्लेख्य हैं -- 1. हिज हाइनेस , 2. हर हाइनेस , 3. चम्पाकली , 4. मयखाना , 5. रहस्यमयी , 6. मन्दिर-दीप , 7. तपोभूमि , 8. भाई , 9. गदर , 10. सत्याग्रह , 11. जनानी सवारियां , 12. तीन इक्के , 13. भाग्य , 14. राजकुमार भोज आदि आदि । ऋषभजी के उपन्यासों को हम ~~प्रायः~~ प्रायः शिल्प-विधि की दृष्टि से दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं -- §अ§ वर्णनात्मक या ऐतिहासिक विधि और §आ§ आत्मकथनात्मक विधि ।

§अ§ वर्णनात्मक या ऐतिहासिक विधि :

जनानी सवारियां , तीन इक्के , सत्याग्रह , गदर , भाई , मन्दिर-दीप , चम्पाकली और हर हाइनेस जैसे उपन्यास इस विधि में लिखे गए हैं । यद्यपि ये सभी उपन्यास वर्णनात्मक विधि में लिखे गए हैं , तथापि लेखक ने उनमें आवश्यकतानुसार अन्य विधियों उपकरणों का प्रयोग भी किया है । जिस प्रकार प्रेमचन्द के प्रायः सभी उपन्यास इस प्रविधि के अन्तर्गत आते हैं , परंतु उन्होंने आंतरिक ढंग से अनेक युक्ति-प्रयुक्तियों के द्वारा शिल्पगत नवीनता और प्रौढ़ता का परिचय दिया है ; ठीक उसी प्रकार ऋषभजी के उक्त उपन्यासों में भी अन्य अनेकानेक प्रविधियों और उपकरणों का प्रयोग हुआ है ।

जैसा कि ऊपर निर्दिष्ट किया गया है , "जनानी सवारियां" ऐतिहासिक या वर्णनात्मक शैली का उपन्यास है , परंतु उसका आंतरिक रचना-विधान परंपरागत उपन्यासों से भिन्न प्रकार का है । उपन्यास सात अध्यायों में विभक्त है --लाला लोग , बेचारी बच्चियां , झांसा-पट्टी , दूकानदारी , हाथ-पैर , ठिकाने और जनानी सवारियां । वैसे तो ये सभी अध्याय की कहानियां अलग-अलग हैं । स्वतंत्र कहानी के रूप में भी इन कहानियों को देखा जा सकता है । परंतु इन सभी

कहानियों को जोड़ने वाला पात्र है रामजी और इन सभी की अन्तर्निहित समस्या एक है । रामजी एक बुर्दाफरोश व्यक्ति है और अपने इस व्यवसाय के लिए वह किन-किन तिकड़मों से गुजरता है उसका व्यंग्यात्मक चित्रण इस उपन्यास में हुआ है । प्रत्येक अध्याय के प्रारंभ में लेखकीय टिप्पणी भी मिलती है, जैसे — "हाथ-पैर" अध्याय के आरंभ में लेखक ने यह टिप्पणी प्रस्तुत की है -- " यही इनके हाथ-पैर हैं, इन्हीं की मदद से उनके रोजगार की बेल फलती है । इन्हीं के बल पर घर बैठे इन्हें माल हासिल होते हैं । यही उनके हाली-मवाली हैं और यही उनके अनुचर हैं, यही उनके यार हैं और यही मददगार । इन्हीं के ज़रिये उनकी पहुंच उन तहखानों तक हो जाती है, जहां सूरज की किरणें भी जाते डरती हैं, इन्हीं के सहारे ये लोग उन बातों को जान लेते हैं, जिन्हें सिर्फ़ ईश्वर ही जानता है, यही उनके हाथ-पैर हैं । "36

इस प्रकार प्रत्येक अध्याय के प्रारंभ में लेखकीय टिप्पणी दी गई है । लेखक ने कहीं विश्लेषणात्मक, तो कहीं "कोमेण्टरी टाइप", तो कहीं कथोपकथनों के माध्यम से कथावस्तु को आगे बढ़ाया है ।

"तीन इक्के" भी वर्णनात्मक प्रविधि का उपन्यास है । यह उपन्यास जुए से सम्बद्ध है, अतः "तीन इक्कों" को प्रतीक रूप में लिया गया है । ये तीन इक्के — शराब, रण्डी और जुआ के प्रतीक हैं । नायक के जीवन में भी तीन मोड़ आते हैं, ये "तीन इक्के" उन तीन मोड़ों के प्रतीक भी हो सकते हैं । लेखक ने कहीं-कहीं किसी शब्द-विशेष के द्वारा व्यंग्य को चित्रित किया है, उदाहरणार्थ जुआ खेलते हुए एक महाशय के मुंह से कहीं "लाभ" शब्द निकल जाता है, तो वहीं से शुरू होता है जुए से होने वाले लाभों को गिनाने का सिलसिला । " पहला लाभ तो यह है कि दुनिया में जितने तरह के शौक़ और तफ़रीह के ज़रिये हैं, उन सबमें जुआ ही एक ऐसी तफ़रीह है, जिसमें खर्च किया हुआ तमाम रूपया अपने मुल्क में ही रहता है । ... दूसरा लाभ यह है कि जुए में अक्सर बड़े आदमी हारते हैं, और इससे उनका रूपया

गरीब आदमियों में बंट जाता है और दौलत का 'रोटेशन' सोसायटी के हर-एक तबके में हो जाता है । आखिर रूस में क्या हो रहा है ? यह कि वहां दौलत को बड़े आदमियों के पास इकट्ठा नहीं होने दिया जाता है , बल्कि गरीबों और मज़दूरों में बंटवा दिया जाता है । इसीका नाम तो 'सोशलिज्म' है , जिसकी तारीफ़ करते-करते हमारे मुल्क के लीडर थकते नहीं है । "[37] उसी प्रकार और भी कई लाभ गिनाए जाते हैं । शब्द से बात चलाने की इस विधि को "शब्द-सह-चयन" अर्थात् "वर्ड-एसोसिएशन" कहते हैं ।[38]

"सत्याग्रह" भी इसी प्रविधि का उपन्यास है , परंतु इसमें भी लेखक ने वस्तु-गठन के कई तरीके अपनाये हैं । कथोपकथन , समाचार, इतिहास के तथ्यों का निरूपण जैसी तकनीकों से लेखक ने काम लिया है । कहीं-कहीं भाषणों के जरिये भी वस्तु-गठन का प्रयास हुआ है । यथा -- " मेरे भाइयो ! मैंने जब से इस बिल का मस्विदा पढ़ा है, मेरे तन-बदन में आग लग रही है ! हमारे नन्हें दुध-मुँहे बच्चों तक को परवाना लेना होगा ! कहां से ? उसी एशियाई दफ़्तर से , जहां आज दुनिया के छंटे बेईमानों का राज्य है , और जो हम हिन्दुस्तानियों को लूटना अपना धरम समझते हैं ? हमारी औरतों को पर्दा खोलकर उन हरामजादों के सामने जाना होगा और दसों उंगलियों की छाप देकर , अपना सारा बदन दिखाकर खास निशानियों को नोट कराना होगा ! .... "[39] उपन्यास के अंत में "उपसंहार" को देकर लेखकीय विश्लेषण भी प्रस्तुत किया गया है । उपन्यास के अंत में उसके नाम को एक विशिष्ट ढंग से रखकर भी लेखक ने एक शिल्पगत प्रयोग किया है । यथा - " 30 जून , 1914 ई. को भारतीयों की युद्ध विषयक लगभग सभी बातें मान ली गईं , तीन पौंड का कर रद्द हुआ , विवाह जायज माने गये , और महापुरुष गांधी के अभूतपूर्व युद्ध ---

सत्याग्रह

में शानदार विजय मिली । आठ वर्ष तक दक्षिण-अफ्रीका में इस युद्ध का

छोटा-सा खेल खेलकर कृष्ण की समदृष्टि का यह अवतार भारतभूमि के सत्याग्रह संग्राम में जुट गया । " 40

"गदर" भी लेखक का एक ऐतिहासिक उपन्यास है । प्रकटतः उसमें वर्णनात्मक विधि को अंगीकृत किया गया है , परंतु कथा को कहने के लिए लेखक ने कथोपकथन , शब्द-सह-चयन , पूर्वदीप्ति , आत्म-संभाषण , तंद्रिल प्रलाप , अखबारी रिपोर्ट जैसी अनेकानेक प्रविधियों का प्रयोग किया है ।

"भाई" की कथा यों प्रकटतः भले वर्णनात्मक ढंग की है , परंतु यहां भी लेखक ने शैली-शिल्प के कई प्रयोग किए हैं । प्रारंभिक "उपक्रम "उपक्रमणिका " में सिंभू और रामसनेही के बचपन के खेलों के माध्यम से भविष्य में उनके जीवन में आनेवाले झंझावातों का संकेत लेखक ने प्रतीकात्मक ढंग से दे दिया है । उपन्यास की कहानी भी "ए टु ज़ेड़ " न होकर आगे-पीछे , पीछे -आगे होती गई है । कथा का उपक्रम बीच की घटना से हुआ है । यथा -- " पर कुछ भी हो , रामसनेही को सिंभू की बहू पर हाथ उठाना लाज़िम नहीं था ; औरतों के झगड़े में मर्दों का क्या काम ? " 41 यहां से कथा का अधोमुखी-प्रवाह मिलता है , अर्थात् कहानी आगे से पीछे की ओर जाती है । लगभग 20 पृष्ठों की कथा के बाद लेखक पुनः अपनी टिप्पणी देने लगता है। यथा -- "थोड़ा-सा कुटुंब का इतिहास कहना है । रामसनेही और सिंभू जाति के चौहान है , और एक ही दादा के पोते थे ; अर्थात् चचेरे भाई । परंतु दोनों अपने पिताओं को एकमात्र संतान होने के कारण साथ-ही-साथ रहते थे ।" 42

हालांकि "मन्दिर-दीप" की कहानी का घटना-काल कुछ ही दिनों का है , पर पात्रों के कथोपकथन तथा लेखकीय विश्लेषण के द्वारा कई पात्रों की कई वर्षों की कथा को उसमें समेटा गया है । दिनकरनाथ , जनक , प्रो.भास्कर , नागरदास प्रभृति की कहानी के अतीत-अंशों को किसी-न-किसी विधि से निरूपित किया गया है ।

"चम्पाकली" और "हर हाइनेस" के सन्दर्भ में भी हम यही कह सकते हैं । बल्कि "हर हाइनेस" में तो कई प्रकरण इस प्रकार आते हैं कि जैसे कोई पात्र अपनी बात कर रहा हो ।

(आ) आत्मकथनात्मक विधि :

इस विधि में कथा की प्रस्तुति इस प्रकार रहती है कि जैसे कोई पात्र अपनी रामकहानी सुना रहा हो । इसमें भी थोड़े-बहुत परिवर्तनों से कथन-रीति में थोड़ा अन्तर आ जाता है । कई बार ऐसा होता है कि उपन्यास में जो पात्र अपनी कथा कहता है वह उसका मुख्य नायक या नायिका होते हैं ; xxxxxxxxxxxx परन्तु इससे विपरीत स्थिति भी कई बार पाई जाती है , अर्थात् कथा कहने वाला पात्र प्रमुख न होकर गौण भी हो सकता है । "रहस्यमयी" उपन्यास की प्रमुख पात्री है सुखवतीदेवी , परंतु कथा रमेशचन्द्र द्वारा कही गई है , जो अपेक्षाकृत एक गौण पात्र है । जैनेन्द्र के "त्यागपत्र" में भी यही विधि मिलती है । "त्यागपत्र" उपन्यास है मृणाल का , परन्तु कथा की प्रस्तुति हुई है प्रमोद द्वारा ।

"तपोभूमि" भी शिल्प की दृष्टि से एक अनूठी औपन्यासिक रचना है । इसमें लेखक ने सहलेखन का प्रयोग किया है । सहलेखन का ऐसा प्रयोग प्रेमचन्द-परवर्ती काल में तो हुआ है , बल्कि दो-तीन ऐसे प्रयोग मिलते हैं । लक्ष्मीचन्द्र जैन के संपादन में अनेक लेखकों ने मिलकर "ग्यारह सपनों का देश " नामक उपन्यास इस परंपरा में दिया था । उसी प्रकार अज्ञेय तथा अन्य ग्यारह लेखकों ने मिलकर "बारह खम्भा " नामक उपन्यास लिखा था । इस परंपरा का एक उपन्यास एक लेखक-दम्पति ने — राजेन्द्र यादव तथा मन्नू भण्डारी — ने दिया है , जिसका शीर्षक है — " एक इंच मुस्कान " ।[43] "तपोभूमि" में कुल चार प्रकरण है — नवीन की कहानी , धरिणी की कहानी , सतीश की कहानी और शशि की कहानी । नवीन की कहानी , धरिणी की कहानी का कुछ अंश और शशि की कहानी जैनेन्द्र द्वारा प्रणीत है ;

तो सतीश की कहानी और धरिणी की कहानी का कुछ अंश ऋषभजी ने लिखा है । इस उपन्यास की दूसरी शिल्पगत विशेषता यह है कि कि यह पात्रात्मक विधि में लिखा गया है । उसके सभी पात्र अपनी-अपनी बात कहते हैं और उनकी बातों से कथा का तंतु अग्रसरित होता जाता है । इस प्रकार की पात्रात्मक विधि हमें ऋषभजी के ही उपन्यास "हिज हाइनेस" में भी मिलती है । प्रेमचन्दोत्तर-काल में नागार्जुन का "इमरतिया" उपन्यास इस विधि में लिखा गया है । उपन्यास में चार मुख्य पात्र हैं । प्रथम तीन प्रकरणों में क्रमशः माई इमरतीदास , मस्तराम और बाबा तथा अंतिम तीन प्रकरणों में क्रमशः बाबा , मस्तराम और माई इमरतीदास अपनी-अपनी बात कहते हैं । चौथा पात्र भगौतीप्रसाद बीच में आता है ।[44] इस प्रकार तीन पात्रों के दो-दो दौर चले हैं । "तपोभूमि" में एक पात्र एक ही बार आया है ।

ऊपर निर्दिष्ट किया गया है कि "हिज़ हाइनेस" में लेखक ने पात्रात्मक विधि का प्रयोग किया है । उपन्यास के छः मुख्य पात्र— हिज़ हाइनेस , भास्करदेव , मां-महारानी , दीवानबहादुर , रानी त्रिपुरी तथा माणिक सरदार — पांच-पांच बार आते हैं ; तत्पश्चात् "हिज हाइनेस" की कहानी अंतिम बार आती है और अंत में "उपसंहार" में लेखक ने विश्लेषणात्मक ढंग से अपनी टिप्पणी प्रस्तुत की है ।[45] इस प्रकार यह विशुद्ध रूप से पात्रात्मक भी नहीं है । अंत में "उपसंहार" देकर लेखक ने इसे मिश्र-शिल्पविधि का रूप दे दिया है । अतः शिल्प की दृष्टि से उसे एक अनूठा प्रयोग ही कहा जायेगा । "मयखाना" विशुद्ध रूप से आत्मकथनात्मक विधि का उपन्यास है ।

ऋषभजी की कहानियों की शिल्पविधि :

ऋषभजी की कहानियों में भी हमें उपरिनिर्दिष्ट दोनों कथन-रीतियां उपलब्ध होती हैं । "दान" , "भय" , "दुनियादारी" , "स्वर्ग की देवी" , " संयोग" , "मनका पाप" , "खेल" , "सुधार की खोज", "निग्रह" तथा "अंधी दुनिया" आदि कहानियां वर्णनात्मक या विश्लेषणात्मक

कथा-विधि को लेकर चली हैं ; तो "कौड़ियों का हार" तथा "पांच रूपये का कर्ज " जैसी कहानियां आत्मकथनात्मक ढंग से कही गई हैं । वैसे प्रकटतः ये दो ही कथन-रीतियां मिलती हैं , तथापि अन्यान्य विधियों से उनका पारस्परिक वैभिन्य देखते बनता है । "दान" कहानी में "कोमेण्टरी की शैली" दृष्टिगत होती है , तो "भय" कहानी का प्रारंभ ही एक अभिसूत्रात्मक वाक्य से होता है — " किसी भेदिये ने भेद दिया और दुश्मनों ने दुश्मनी निकाली । " [46]

ऋषभजी के उपन्यासों की भूमिकाएं :
==========================

शिल्प पर विचार करते हैं , तब ऋषभजी के उपन्यासों में भूमिकाओं के शीर्षक पर हमारा ध्यान बरबस आकृष्ट होता है । "सत्या-ग्रह " और "गदर" जैसे ऐतिहासिक उपन्यासों में लेखक ने परिश्रमपूर्वक अनुशीलनात्मक एवं शोधपरक भूमिकाएं दी हैं । इन भूमिकाओं से हमें प्रसादजी की भूमिकाओं का स्मरण हो आता है । अन्यx अन्य उप-न्यासों में भूमिकाएं इस प्रकार प्रस्तुत हुई हैं कि ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक सीधे अपने पाठकों से बात कर रहा है । भूमिकाओं के शीर्षक भी अलग-अलग ढंग के हैं , यथा — "मेरी राय में " §मयखाना§ , "प्रवचन" §हिज़ हाइनेस§ , " अपनी बात" §तपोभूमि§ , "आरंभिक " §रहस्यमयी§ , " आइये । " §चम्पाकली§ ," उपक्रमणिका " §भाई§, "प्रारंभिक" §सत्याग्रह§ , " जी हां , आप ही से ... " §तीन इक्के§ "आप सच मानिये " § जनानी सवारियां § आदि आदि । इन विभिन्न शीर्षकों से यह प्रतिध्वनित होता है कि बात कहने के विभिन्न ढंगों की ओर लेखक सचेत है और प्रत्येक बात को एक नये ढंग से कहना यह उनकी प्रवृत्ति है ।

:: भाषिक संरचना ::
============

भाषिक संरचना या भाषाशैली कथा-साहित्य का एक आवश्यक तत्त्व है । भाषा तो लेखक का हथियार है , साधन है , उसके द्वारा ही

उसका कार्य-व्यापार सधता है । राल्फ फोक्स महोदय ने तो इसीलिए कहा था -- " नोवेल इज़ नोट मियरली ए फिक्शनल प्रोज , इट इज़ ए प्रोज आफ मेन्स लाइफ़ " [47] -- अर्थात् उपन्यास केवल प्रकथनात्मक गद्य मात्र नहीं है , वह मानव-जीवन का गद्य है । अभिप्राय यह कि उपन्यास में प्रयुक्त भाषा लोगों की भाषा होती है । लेखकीय विश्लेषण और टिप्पणियों के अतिरिक्त जो कुछ भी होता है , उसे लोगों की भाषा में ही अभिव्यक्त होना है । इसीलिए हमारे यहां काव्य में "शब्द" और "अर्थ" उभय का महत्त्व है । "अर्थ" वस्तुपक्ष है , "शब्द" शिल्पपक्ष और भाषापक्ष । काव्य की व्यापकतम परिभाषा में उपन्यास भी आ जाता है । अतः उसका सरोकार भी भाषा से होगा ही । बल्कि अधिक होगा , क्योंकि जैसा ऊपर कहा गया है , वह मानव-जीवन का गद्य है । तात्पर्य यह कि उसमें बोलचाल की भाषा को विशेषतः लिया जाता है । राल्फ फोक्स ने तो अपने उपन्यास विषयक सैद्धान्तिक ग्रंथ का नाम ही "नोवेल एण्ड द पिपुल " ऐसा रखा है , इससे ध्वनित यही होता है कि उपन्यास का सीधा सरोकार लोगों से है । ई.एम. फारस्टर ने भी उपन्यास के सन्दर्भ में "पात्र " के लिए "पिपुल" शब्द का ही प्रयोग किया है । [48]

परिवेश के निर्माण में भाषा का योग :

उपन्यास में यथार्थ परिवेश का विशेष महत्त्व है , क्योंकि परिवेश की यथार्थता ही उसे विश्वसनीयता प्रदान करती है । प्रेमचन्द , रेणु , नागार्जुन , डा. राही मासूम रजा , शैलेश मटियानी ,जगदंबाप्रसाद दीक्षित प्रभृति लेखकों में हम इस तथ्य को रेखांकित कर सकते हैं कि उन्होंने अपनी कथाकृतियों में परिवेश के अनुरूप भाषा के सफल प्रयोग द्वारा एक विश्वसनीय जगत की रचना की है । जगदंबाप्रसाद दीक्षित के उपन्यास "मुर्दाघर" में बम्बई की झोंपड़पट्टी के बीभत्स और जघन्य परिवेश को लिया गया है , अतः पूरे उपन्यास में लेखक ने उसी बम्बइया भाषा का प्रयोग किया है । यथा --"किधर भी चोरी करना पन इस्मगलर ... दारूवाला ... रण्डीवाला ... इधर कभी भूलके भी नहीं जाने का । नई तो पोलिस जान से मार डालेगा मार-मार के । कभी नहीं छोड़ेगा

.... सारा पोलिसखाता उधर से च चलता । " [49]उसी प्रकार आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का उपन्यास "चारु-चन्द्रलेख " तेरहवीं शताब्दी के मध्यकालीन भारत का मानक-चित्र प्रस्तुत करता है ।[50] अतः उसकी भाषा अपने उस ऐतिहासिक परिवेश के अनुरूप है । यथा — " मूर्ख राजाओं और चाटुकार पंडितों ने 'अरि ' का अर्थ ही शत्रु हो जाने दिया है । कभी पड़ोसी राजा को 'अरि ' कहा जाता था , मित्र वह होता था , जो पड़ोसी का पड़ोसी हो । किसी समय ऐसा विचार ठीक रहा होगा । परंतु अभी जो तुरूक आये हैं , वे सबके शत्रु हैं । ... 'अरि ' का 'अरि ' होकर भी तुरूक मित्र नहीं बनेगा । गांठ बांध लो इस बात को । मैं कान्यकुब्ज का उच्छेद देख चुका हूं , गौड़ का पराभव देख चुका हूं , चौहानों का मर्दन सुन चुका हूं , चंदेलों के पराजय की कहानी सुन चुका हूं । मित्रसेना के नाम पर गाहड़वारों का तुरूकों को निमंत्रित करना कितनी बड़ी भूल थी ।" [51] यहां "मुरदा-घर" तथा "चारु-चन्द्रलेख" से जो उदाहरण दिए गए हैं , वे साभिप्राय हैं । एक में झोंपड़पट्टी का परिवेश है , अतः भाषा उस प्रकार की है ; दूसरे में मध्यकालीन ऐतिहासिक परिवेश है , अतः भाषा उसकी गरिमा के अनुरूप है । परिवेश के अनुरूप भाषा का प्रयोग हमें ऋषभजी के उपन्यास तथा कहानियों में भी मिलता है । यहां कुछ उदाहरणों के द्वारा उसकी चर्चा करने का उपक्रम है ।

"भाई" उपन्यास में बुलन्दशहर के मधुपुर गांव के परिवेश को लिया गया है , अतः उसकी भाषा में वही ठेठ भाषा के ग्रामीण प्रयोग मिलते हैं । सिंभू की पत्नी सरूपी एक कर्कशा स्त्री है । देवर रामसनेही से उसकी कहासुनी हो जाती है । सरूपी की किसी बेजा बात पर राम-सनेही का हाथ उठ जाता है । इस संदर्भ में वह अपने पति सिंभू से आँखें काढ़ते हुए कहती है — " और कैसे तुम्हें बिसवास दिलाऊं ? अपने अपने राजा-से भाई की कसम खाली , तो भी इतबार नहीं । हाय मा ! तैने पैदा होते ही मुझे क्यों नहीं मार डाला ! अच्छक के हाथ सौंपा , जो अपनी औरत को पिटवाकर इस तरह चुपचाप बैठा है ! धिक्कार

है ऐसी मरदूमी पर ।। " [52] सिंभू हारा-सा बैठा था । वह अपनी कर्कशा पत्नी के स्वभाव को भलीभांति जानता है , अतः कहता है -- "सरूपी , तू मुझे जोश मत दिला । मैं जनखा नहीं हूं । और अगर और किसी की बाबत ऐसा सुनता , तो अब तक मैं ही रहता या वह । पर जब अपना कीना खोटा हो , तो परखने वाले का क्या दोस ! जब तुझमें ही खोट है , तो मैं और किसीसे क्या कहूं । चार बरस गौने को हुए इन चार बरसों में तैने सब जगह अपना नाम जाहिर कर लिया । कोई तेरी तारीफ नहीं करता । सब कहते हैं -- अमीर की बेटी है , मां-बाप की सिर-चढ़ी है । .... तेरे राज में चूल्हा अलगहुआ :, घर अलग हुआ । अब बोल-चाल बाकी रहा है , इसको भी कहे , तो बन्द कर दूं ? तैने बोल-चाल बन्द कराने के लिए भी सैंकड़ों फन्द-फरेब रचे , सैंकड़ों कसमें खाईं , पर अन्त में सब गलत साबित हुए , बता तेरी कसम पर कैसे विश्वास करूं ? " [53]

इसके विपरीत "मन्दिर-दीप" उपन्यास का परिवेश नगरीय है । उसके पात्र भी सब पढ़े-लिखे कालेज के युवक-युवतियां हैं । अतः इस उपन्यास की भाषा का स्तर "भाई" की भाषा से भिन्न छोर पर पड़ता है । प्रोफेसर भास्कर के विषय में कालेजियन युवती रानी एक स्थान पर बताती है -- " मेरी राय में आप जरूरत से ज्यादा यथार्थ-वादी बन रहे हैं । मनुष्य जीवन इतना प्रवंचनामय हो उठा है कि अपनी त्रुटियों की कल्पना और आलोचना करने की ओर उसका मन कभी नहीं चलता । हमारे जीवन में इतने प्रलोभन हैं कि बिना किसी आधार के स्थिर रहना बिरलों का ही काम है । जीवन की बुराई और अच्छाई को परखने के लिए आवश्यक तौर पर हमें अपने सामने ऐसी मूर्तियां प्रतिष्ठित करनी होंगी , जिनकी छाया से हमारे अन्दर का कण-कण आलोकित हो उठे । यदि हम यथार्थवाद की भूल में पड़कर मानव-चरित्र की प्रत्येक त्रुटि को क्षमा करते चले जाएं , तो हमें कभी ऊपर उठने का मौका नहीं मिल सकता । " [54]

"जनानी सवारियां" में बुर्दाफरोशी के परिवेश को लिया गया है । इस उपन्यास का खलनायक रामजीदास तरह-तरह के फन्द-फरेबों से भोली-भाली लड़कियों को तथा ग्राहकों को फांसता है । उसकी जबान कैंची की तरह चलती है । जिस प्रकार के व्यवसाय में वह पड़ा है , भाषा भी उसीके अनुरूप बिलकुल दलालों-भड़वों जैसी है । ~~अथ~~ एक स्थान पर वह लड़कियों के शौकीन लालाजी को किस तरह पटाते हैं यह इस उद्धरण से स्पष्ट होगा -- " जी , तो अठारह हज़ार की लागत में यह चीज़ हाथ पड़ी है । यों नवाब ..... ने पच्चीस हज़ार का चेक लेकर अपने आदमी को भेजा था , कि इस छोकरी को मैं उनके पास भेज दूं , लेकिन आप जानिये , मैं आपका गुलाम ठहरा , आपकी रोटियों से मेरा रोम-रोम पला है , बिना आपकी इज़ाज़त के इस हूर को मैं क्यों हाथ से निकलने देता ? .... भला यह आपके कहने की बात है ? आपका हुक्म हो , तो इस मुफलिसी में भी ऐसी-ऐसी छः लौंडियां आपके कदमों में लाकर डाल दूं , और एक डबल मांगूं तो बनिए का नहीं , भंगी का कह दें । "[55]

"रखैल" कहानी के नन्दू ~~बाबू~~ बाबू एक रईस आदमी हैं । लेखक ने उनकी यात्रा के सरसामान का जो जिक्र किया है वह उस परिवेश के अनुरूप है । यथा -- " दो सूट-केस , एक हैण्ड-बैग , एक वायोलिन , बिस्तर , छड़ी , छत्तरी और ~~पहनने के~~ पहनने के कपड़े , हाथ में चमकती हुई अंगूठी , जेब में बेशकीमती घड़ी , छड़ी में सोने की मूठ और बक्स और सूटकेस में चांदी का लोटा-गिलास , रेशमी कपड़ों में कई जोड़े , एक कीमती दूरबीन और बहुत-सी ऐसी कीमती और सूफ़ीयानी चीजें -- जो न हों , तो अमीरों की अमीरी को प्रकट होने में दिक्कत पड़े । "[56]

उपर्युक्त विवेचन से इतना तो असंदिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि उपयुक्त परिवेश की सृष्टि के लिए उसके अनुरूप भाषा का प्रयोग लेखक को करना ही पड़ता है । वस्तुतः प्रत्येक व्यक्ति

अपने परिवेश की भाषा को लेकर आता है । डा॰ अर्चना गौतम ने इस सन्दर्भ में लिखा है — " गुजरात के गांवों में मध्य या पिछड़ी जातियों में जब किसीके यहां "पुत्र" का जन्म होता है , तो कहते हैं — "निशा-ळियो आव्यो " , अर्थात् " स्कूल जाने वाला आया " । पर लड़की के लिए कहा जाता है — " मांडवो आव्यो " , अर्थात् "मण्डप " आया । लड़की की शादी में मंडप आदि बांधना पड़ता है । इससे एक बात स्पष्ट होती है कि इन लोगों में लड़कियों को नहीं पढ़ाया जाता होगा ।" [57]

चरित्र-निर्माण में भाषा का योग :

भाषा व्यक्ति के चरित्रका एक निर्णायक तत्व है । गुजराती के एक सुभाषित में कहा गया है — " कोयलडी ने काग , वाने वरताये नहीं । पण एनो जिभलडीए जवाब , साचुं सोरठियो भणे ।। " अर्थात् कौआ और कोयल एक ही वान या रंग के होते हैं , परंतु उनकी पहचान तब होती है जब वे बोलते हैं । कहने का अभिप्राय यह है कि वाणी से मनुष्य का चरित्र उद्घाटित होता है । कोई व्यक्ति कैसी भी बनावट क्यों न करें , कभी-न-कभी सच्चाई उसकी वाणी के द्वारा अभिव्यक्त हो ही जाती है । इस संदर्भ में एक कथा भी मिलती है जिसमें एक निर्जन निबिड़ जंगल में एक अंध साधु भटके हुए सेवक , मंत्री और नरेश की पहचान केवल उनकी वाणी के आधार पर दे देते हैं ।

चरित्र में व्यक्ति के गुण-दोष , शिक्षा , विचार , सामाजिक स्तर आदि कई चीजें आती हैं । अतः लेखक यह यत्न करता है कि यथार्थ चरित्र-निर्माण के लिए वह उसके अनुरूप भाषा का प्रयोग उस चरित्र-विशेष द्वारा करवाएं । "जनानी सवारियां" का रामजी बुर्दाफरोशी का पेशा करता है । वह कितना घाघ , कांइयां और चंट तथा हरामी है ,; वह उसकी इस बात से प्रमाणित हो जाता है — " जनाब , यह बात तो उनसे करना जो साले दोगले होते हैं । यहां न कोई दल्ले हैं ; न उल्लू के पट्ठे — कि इस तरह इधर-उधर मारे-मारे फिरते रहें । यह काम तो मैं आप जैसे भागवानों की दिल्लगी के लिए अपने सिर लिए हुए

हूं , वर्ना आप जानते हैं , जब से खत्तियों के कारबार में रूपया लगाया है , दम मारने की फुर्सत नहीं मिलती । उधर कुछ जमींदारी ली है , कोल्हू खरीद लिए हैं , भ्रक्रिक्रि× भतीजे की स्टेशनरी की दुकान पर भी कुछ वक्त देना पड़ता है । और आप जानिए — आखिर पूजा-पाठ , स्नान-ध्यान में भी कुछ-न-कुछ समय लग ही जाता है ? फिर भला इस धंधे के लिए वक्त ही कहां रहता है ? जो लोग मेहरबान हैं , पुराने रसिया हैं , एतबार रखते हैं , चार बार आदमी भेजते हैं ... तो दो बार जाता हूं । जो मांग लिया मिल गया , जो पेश किया मंजूर कर लिया गया । अलबत्ता माल मेरा हमेशा इक्कीस रहता है । " [58]

"भाई" उपन्यास की दुर्गा एक सुशील , समझदार , उदार , क्षमाशील और घरू स्त्री है । उसके पति रामसनेही से गुस्से में अपनी भाभी भ्रभ्रश्रि सरूपी पर हाथ उठ जाता है । जब रामसनेही का गुस्सा उतर जाता है तो उसे समझाते हुए वह कहती है — " हमेशा से इतना सहते आए हैं , क्या आज एक मामूली-सी बात पर इतना बिगड़ बैठना उचित था ? तुम तो मरद हो , मैं तुम्हें सीख देती क्या अच्छी लगूंगी, पर सोचो तो , तुम्हारे भाई ने और तुम्हारे ताऊ ने तुम पर कैसा अहसान किया है । औरत जात बुरी होती ही है ; मरद को औरतों की बातों पर अपना धीरज नहीं छोड़ना चाहिए । " ... अपना-अपना सुभाव है । उसका सुभाव लड़ने का है , हमारा सुभाव सुनने का है । ... तुमने उस साधु और ततैए की कथा नहीं सुनी ; उसने बार-बार उसे बचाया , और उसने बार-बार काट खाया । सो यह तो अपना सुभाव है । और , हम पर तो उन लोगों का कुछ अहसान भी है । ... रोना-धोना तो बावलापन है । मरदमी इसीमें है कि जो कुछ किया , उसका पराशचित (भ्रश्रश्रिबल) (प्रायश्चित) करो । " [59]

उपर्युक्त कथन से दुर्गा के चरित्र पर अच्छा-खासा प्रकाश पड़ता है । उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा से उसकी ग्रामीणता , अशिक्षा आदि तो झलकती है , परंतु दूसरी तरफ अशिक्षित होते हुए भी वह कितनी समझदार है , कितनी समाधान-प्रिय और कलह-विरोधी है , यह भी

प्रमाणित होता है । दुर्गा के इस स्वभाव के कारण रामसनेही सरूपी की माफी मांगने तक को तैयार हो जाता है ; परंतु सरूपी की ताती कडुवी बोली फिर उसे उत्तेजिक कर देती है और बात बिगड़ जाती है । सरूपी की भाषा से ही उसका कर्कशापन फूटता है । यथा - "जिस हरामजादे ने मेरे ऊपर हाथ उठाया , दामाद बनाकर उसकी खातिर करोगे ? हूं । मैं इसकी छाती का खून पियूंगी । " 60

उक्त दोनों कथनों से दुर्गा तथा सरूपी के चरित्रों की विसदृशता (कोन्ट्राडिक्शन) प्रकट होती है । दोनों के चरित्र का यह वैपरित्य लेखक ने भलीभांति व्यक्त किया है ।

इसी×xxx× प्रकार रामसनेही और सिंभू के चरित्र पर भी उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा से प्रकाश पड़ता है । रामसनेही सीधा-सादा और सरल व्यक्ति है , पर जल्दी उत्तेजित हो जाता है ; दूसरी तरफ सिंभू क्षमाशील स्वभाव का है , गुस्से को पीना जानता है , पत्नी के कर्कशा स्वभाव से भी वह भलीभांति परिचित है । अतः उसका पक्ष लेने के स्थान पर वह उसे ही डांटता है । इन दोनों का चरित्र निम्नलिखित उद्धरणों से स्पष्ट होगा -- " हे भगवान , तू एक वक्त रोटी दीजो , पर ऐसी स्त्री किसी को नहीं । ईश्वर ! या मुझे उठा ले या इसे । जो स्त्री पति के सुख-दुःख का खयाल किए बगैर हर वक्त उसका खून पीने को तैयार रहती है , मैं उसके बिना भी रह सकता हूं , और उसे छोड़कर मरना भी पसंद करता हूं । " 61 इस पर सरूपी आग-बबूला होते हुए कहती है -- " मैं तो खुद परमात्मा से हाथ जोड़ती हूं , वह मेरा चोला बदल दे , पर क्या करूं , जब तक आए नहीं , तो कैसे मर जाऊं । परमात्मा किसीको ऐसा पति न दे , जो दूसरे मर्दों से अपनी घरवाली को पिटवाकर भी चुपचाप बैठा रहे । " 62

सरूपी ने मानो सिंभू की दुखती रग पर हाथ रख दिया था , अतः क्षोभ, क्रोध और विवशता का एक ऐसा प्रबल उबाल आया कि अपना आपा खोते हुए वह कहने लगा -- " हरामजादी ! बेहया !

बेहया । तेरी किस बात का विश्वास करूं ? तुझे मालूम है, अगर तेरी बात सच होने का मुझे विश्वास होता तो आज इस दुनिया में मैं ही रहता, या तेरे ऊपर हाथ उठाने वाला । " 63

दूसरी तरफ रामसनेही जब क्रोधित होता है, तब सारासार का विवेक भूल जाता है । अपनी इस कमजोरी के कारण ही वह सिंभू की सहानुभूति को भी खो बैठता है । सरूपी की आग बरपाने वाली वाणी को सुनकर वह आपे से बाहर हो जाता है और सिंभू के सामने ही न कहने वाली बातें कह जाता है -- " बस भई सिंभू, रहने दो ; मैं इस चुड़ैल के हाथ की चिलम नहीं पियूंगा । सच पूछो तो मैं यहां आकर भी पछता रहा हूं । मैं आया था किसी और काम से -- कोई और बात कहने -- पर अब वह बात कहकर मैं अपनी हेठी कराना नहीं चाहता । अब मैं कहता हूं -- हमारा-तुम्हारा चूल्हा जुदा हुआ, अब आज से आना-जाना, बोल-चाल और लेन-देन भी खत्म । आज से हम तुम्हारे लिए मर गए, तुम हमारे लिए । / सरूपी की ओर संकेत करके / और इस हरामजादी को मैंने अपने घर में देख लिया, तो कल तो खीर की थाली ही फैंकी थी, अब जूतों से इसकी खबर लूंगा । " 64

"हिज़ हाइनेस" उपन्यास में निम्नलिखित कथन से न केवल मां-महारानी के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है, प्रत्युत बड़ी रानी की चरित्र-गत विशेषताएं भी प्रकट होती हैं -- " उनके वचनों ने मेरे लिए अमृत का काम किया, उनके [बड़ी रानी के] उपदेशों में मेरे व्यक्तित्व की सख्ती धीरे-धीरे घुलने लगी, गंभीरता और सेवा की मंगलमयी भावनाओं का जैसे उन्होंने मुझे इंजेक्शन दे दिया । मेरे कार्यक्रम में जमीन-आसमान का अंतर आ गया । मैंने हमेशा नौकर-नौकरानियों को पशु समझा था, कभी मैं उनके साथ मेहरबानी से पेश नहीं आती थी, प्रजाजन के प्रति भी मेरे खयालात करीब-करीब इसी तरह के थे । लेकिन उन्होंने मुझे सिखाया कि नौकर की आत्मा भी उतनी ही मूल्यवान, उतनी ही आदरणीय और उतनी ही चिन्तनीय है, जितनी खुद मालिक की । उन्होंने मुझे

बताया कि प्रकृति की दृष्टि में पूर्व जन्म के कर्मानुसार मनुष्य को भिन्न-भिन्न कर्तव्य सौंप दिए जाते हैं और जो अपने कर्तव्य को जितनी समझदारी के साथ निभा देता है, उसका जीवन ही सफल है। उनका कथन था कि प्रजा-जन हमारे सेवक नहीं, मालिक हैं और राजा-रानी की उत्पत्ति उन पर शासन करने, उन पर अत्याचार करने, उनसे घृणा करने के लिए नहीं, बल्कि उनकी रक्षा और सेवा करके उनका आशीर्वाद-भाजन बनने के लिए हुई है। " 65

"मैंने "पांच रूपये का कर्ज" नामक कहानी में एक बूढ़े मारवाड़ी सेठ का चरित्र आता है। वह कहानी के नैरेटर "मैं" से दीनदयाल नामक एक व्यक्ति के सम्बन्ध में पूछता है कि दीनदयाल आदमी तो अच्छा मालूम पड़ता है; तब "मैं" उसे टालने के उद्देश्य से अनमने भाव से कहता है -- " दुनिया में सभी अच्छे हैं, और सभी बुरे हैं। " 66 तब वह बूढ़ा मारवाड़ी "मैं" से कहता है -- " थारा बेटा जीता रहे, साहेब, बात आपने एक लाख रूपये की कही है। दुनिया में आके कौन अच्छा रहे हैं ? यू तो साहेब, काजर की कोठरी है। या में चतुर-सुजान भी रेख लगा जायं हैं। " 67

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि भाषा से चरित्र के गुण-दोष ही नहीं; उसका माहौल, शिक्षा-दीक्षा, जाति, धर्म, मान्यताएं, सामाजिकता आदि अनेक आयामों पर प्रकाश पड़ता है और उक्त उदाहरणों से यह अब भलीभांति प्रमाणित हो गया है कि इस संबंध में लेखक ने भाषा से काम लेने में कोई क्षति नहीं की है।

ऋषभचरण जैन की भाषा-शैली के कतिपय गुण :

ऋषभजी की भाषाशैली में हम निम्नलिखित गुणों को रेखांकित कर सकते हैं :- 1/ सरलता और सुबोधता, 2/ प्रवाहिकता, 3/ समास-शैली, 4/ व्यासशैली, 5/ कथोपकथनों की संक्षिप्तता, 6/ कथोपकथनों में पात्रानुरूप भाषा का प्रयोग, 7/ सांकेतिकता, 8/ व्यंग्यात्मकता,

9/ भाषा में कहावत-मुहावरों के प्रयोग , 10/ नवीन भाषाभिव्यंजना का प्रयत्न आदि आदि । अब एक-एक करके हम इन पर विचार करेंगे ।

1. सरलता और सुबोधता : सरलता और सुबोधता शैली के बहुत बड़े गुण हैं । कहा भी गया है -- " सिंपलीसिटी इज़ द ग्रेटेस्ट आर्ट । " वस्तुतः क्लिष्ट और दुरूह लिखना सरल होता है , सरल लिखना कठिन होता है । जिनका जितना ज्यादा भाषा पर अधिकार होता है , वह उतना ही अधिक सरलताभिमुख होता है । ऋषभजी के लेखन में जो सरलता है , उसे निम्नलिखित कथनों में देखा जा सकता है :-- " चैत की सुबह थी । दो बालक थे , कोई सात-सात बरस के । एक दूसरे का हाथ पकड़े , किलकारी मारते , उछलते -कूदते मधुपुर गांव के बाहर की ओर दौड़ते चले जा रहे थे । " 68 "दान" कहानी का प्रारंभ ही कितनी सादगी से होता है -- " चन्दूलाल , रामचन्द्र, ज्योतिप्रसाद और हुकूमतराय चार आदमियों के नाम हैं । चन्दूलाल एक घड़ी की दुकान में बीस रुपये का नौकर है । स्त्री है , एक बच्ची है । गुजर-बसर मुश्किल से होती है । " 69 सरलता और सुबोधता कई बार सामान्यीकृत सूक्ति-सूत्र में बदल जाती है । ऐसे कुछ सूक्ति-वाक्य हमें ऋषभजी के लेखन में स्थान-स्थान पर मिलते हैं । नीचे कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं :-- /1/ चढ़ाकर गिराना और गिराकर चढ़ाना प्रकृति का अटल नियम है । जो जितने दक्ष हैं , उनका उत्कर्ष उतना ही अधिक स्थायी रहता है ।" 70 /2/ दुनिया तो बड़ी बुरी है , जरा-सी देर में दूध-सी चादर काली हो जाती है । " 71/3/ बात यह है कि जिस घर में चुगलखोरों की पैठ हो जाती है , उसके नाश में देर नहीं लगती । " 72 /4/ सब आदमी शठ नहीं होते ; जो होते हैं , वे भी हर किसीके साथ शठता नहीं करते । बांबी में घुसते वक्त सांप को भी सीधा होना ही पड़ता है ।" 73 /5/ " हम तो संसार में नाचनेवाले मिट्टी के पुतले हैं ; एक दिन ठसक लगेगी -- फूट पड़ेंगे । " 74 /6/ "बखत निकल जाता है , बात रह जाती है । " 75 /7/ " दुनिया में कोई ऐसी बात नहीं , जो सच्ची लगन और मेहनत से

सामने नामुमकिन हो । लोगों ने धुन के बल पर मुल्क फतह कर डाले , इन्कलाब पैदा कर दिये , बड़ी-बड़ी ताकतों को झुका दिया । " 76 /8/ मैं केवल यह समझता हूँ कि आदमी को आदमी मानकर ही चलने का हमें अधिकार है ; देवता समझकर उसके इर्द-गिर्द चक्कर लगाना हमारा दम्भ और गुरूरम है । " 77 /9/ " मेरा यह एतकाद है कि इन्सान दूसरों के झगड़ों में जितना कम पैर फंसाये , उतना ही सुखी रहता है । " 78/10/ " अशिक्षा के कारण स्त्रियों की उदारता दीनता और कायरता बन गई है । " 79 /11/ " पुरुष अगर स्त्री की इच्छाओं को समझ ले , और अपनी इच्छाओं को उसकी इच्छाओं में रमा दे , तो मैं समझता हूँ , आत्मिक सुख मिल सकता है ; क्योंकि यही स्वाभाविक है । " 80 /12/ " स्त्री के मन का पंथ बहुत दुर्बल है ; थोड़ी देर इधर-उधर घूमकर ही वह थक जाता है , और कोई आधार ढूंढने लगता है । " 81 /13/ जिसने अंत तक कोशिश न छोड़ी , वह जरूर सफल होगा , वही तर जायगा । " 82 /14/ अरे फेल तो होना ही चाहिए ; तभी इन्सान पास होना सीखता है । " 83 /15/ प्रेम में जब कमी होती है , तभी प्यार करने के लिए दिल पर जोर डालना पड़ता है । " 84 /16/ " मन सुखमय है ; सुख के अतिरिक्त मन में कुछ है ही नहीं । मैं नहीं जानती , वैज्ञानिक लोग , मन की क्या व्याख्या करते हैं , पर मेरी समझ में तो जीवन की सद्भावनाओं का पुंज ही मन है । मन कभी दुःखी नहीं होता , दुःख मन पर चिपक जाते हैं । " 85 /17/ " औरत का दिल बेहद कोमल होता है , पर साथ ही बेहद गहरा और सहनशील भी । सब तरह का अत्याचार और सब तरह की वेदना जो औरत दिल की तह छिपाये रह सकती है , मर्द-बच्चे की मजाल नहीं कि उसे समझ सके । " 86

ऐसे तो सैकड़ों वाक्य मिल सकते हैं । यहां कुछ उदाहरण के लिए प्रस्तुत हुए हैं । इनसे लेखक की शैली में जो सरलता , तरलता और सुबोधता है , उसका परिचय हमें प्राप्त होता है ।

2. <u>प्रवाहिकता :</u> कबीर ने भाषा को बहता नीर एक अलग संदर्भ में कहा है । परंतु यदि उसे हम उसके शाब्दिक अर्थों में ग्रहण करें, तो भी अनौचित्य की कोई बात नहीं रहती । अतः भाषा में जितना प्रवाह, जितना बहाव होगा ; पाठक को वह उतनी ही ज्यादा प्रभावित करेगी । ऋषभजी की गद्यशैली में भी हमें यह प्रवाह {फ्ल्यूसिडिटी} मिलता है । "मयखाना" उपन्यास का नायक एक मद्यप है । उसे शराब की लत पड़ चुकी है । हालांकि वह जानता है कि यह लत बुरी है । एक स्थान पर वह अपनी प्रेमिका से इस सन्दर्भ में बात करता है । उसके उस कथन में जो प्रवाह है, उसके प्रति यहां ध्यान आकृष्ट किया गया है — " जितने दिन मैं वहां रहा, करीब-करीब हररोज शराब के इस तरह के दौर चलते रहे और जिन्दगी के वे दिन एक अजीब गंदगी में कटते रहे । हां, ... हां ... चौंकती क्यों हो ? अब भी इसे गन्दगी न कहूं ? क्या यह अच्छी चीज है जानेमन ? ... यह ज़हर है, ज़हर । समझीं ? लेकिन इस ज़हर में यही तो जादू है कि ज़हर समझकर भी इसे पीना ही पड़ता है । कोई ताकत नहीं, जो इस ज़हर की लत को छुड़ा सके — कोई मंत्र नहीं, जो इस जालिम के काटे का इलाज कर सके— कोई बशर नहीं जो इस बला से छुटकारा दिला सके । " 87

इस सन्दर्भ में एक और उदाहरण "चम्पाकली" उपन्यास से यहां प्रस्तुत है — " चम्पाकली ने अपने गले के चारों तरफ लिपटे हुए उसके बाहुओं को अलग न किया ; न वह उसे अप्रिय लगे । उसने आँखें बन्द करके मिनट-भर तक न जाने किस स्वर्गीय सुख का अनुभव किया । वह आज जैसे गंगा नहा गई थी । उसने जैसे आज जन्म भर के व्रत का फल पा लिया था । यही इसका स्वामी है । इसीके लिए उसके हृदय की तलहटी में शुद्ध प्रेम का सागर हिलोरें मार रहा था । यही उसका उद्धारक है । इसीसे मिलकर आज उसके जीवन की सारी साध, सारी उमंगें, सारी कामनाएं, सारी अभिलाषाएं पूरी हो गईं । " 88

उक्त दोनों कथनों की गद्यशैली में हमें प्रवाह, बहाव, खिंचाव

3. समासशैली : कहा गया है — " ब्रेविटी इज़ द सोल आफ आर्ट. "
लेखक की गद्यशैली की भी यह एक कसौटी होती है कि वह कितने कम शब्दों में कितनी अधिक बातें कह देता है । ऊपर जो सूक्तियां दी गई हैं उनमें जीवन के सत्य को संक्षिप्तता के साथ प्रस्तुत किया गया है । अतः वे सब तो इसके उदाहरण हैं ही , और भी अनेक स्थानों पर ऐसे उदाहरण मिलते हैं , जहां लेखक ने संक्षिप्तता से काम लिया है । "भाई" उपन्यास के अंत में सिंभू का जो कथन है वह इसका एक अच्छा उदाहरण है । कुछेक वाक्यों में सिंभू अपना पश्चाताप , करणीय-अकरणीय सबकुछ बता जाता है — " दुर्गा , मैंने बड़ा पाप किया है । मैं जाता हूं ; लौटकर नहीं आऊंगा । मेरी जगह-जमीन , मेरा रूपया-पैसा और मेरा मनोहर अब तुम्हारा है ... मैं जाता हूं — सीधा जज साहब के पास जाऊंगा , सब हाल सच-सच कह दूंगा । रामसनेही निर्दोष है । सारा जाल नूरूद्दीन ने रचा था । मेरी मत भी उसीने फिराई थी । ... बस , अब जाता हूं । " [89] सिंभू कोठरी से निकला , कुछ सोचकर फिर आया, और बोला — " दुर्गा , मैं सदा के लिए जा रहा हूं । एक बात पूछता हूं । सच बताना । " सिंभू ठहरकर फिर बोला — " दुर्गा, कुतबी ने मुझसे कहा था — " रामसनेही ने सल्पी पर मूठ छुड़वाई थी । तुझे गंगा माता की सौगंध सच बता । यह बात सच थी या झूठ ? " दुर्गा कांप उठी । बदहवास-सी होकर कह उठी — "हाय राम ! कैसा कलंक ! " सिंभू ने उत्तर पा लिया । वह फिर वहां न ठहरा । " [90]

4. व्यासशैली : "व्यास " का अर्थ ही ~~फैलाव~~ फैलाव होता है , विस्तार होता है । कई बार शैली में प्रवाह लाने के लिए , कई बार किसी बात पर तवज्जो देने के लिए , कई बार जिसे सूत्रात्मक रूप में कहा गया है उसे सोदाहरण प्रमाणित करने के लिए , इस शैली का प्रयोग लेखक करते हैं । ~~ऋषभ~~जी के लेखन में भी इसके कई उदाहरण मिल सकते हैं ।

"चम्पाकली" उपन्यास में रामदयाल एक खास रकम चम्पाकली को देना [illegible] चाहता है , पर चम्पाकली इन्कार करती है , क्योंकि वह उसे प्यार करती है और वेश्या होते हुए भी वह अपने प्यार की क़ीमत नहीं लगा सकती । तब रामदयाल जो धाराप्रवाह रूप में बोलते हैं , वह इस शैली का एक अच्छा उदाहरण है । रामदयाल का कथन तो दो-तीन पृष्ठों तक चलता है । यहां उसका कुछ अंश प्रस्तुत है — "तो सुनो , इसलिए ले जाओ कि तुम रात-भर मेरे पास रही हो । इसलिए ले जाओ कि तुम्हारी एक रात की आमदनी का मैंने नुकसान किया है । इसलिए ले जाओ कि यह तुम्हारा पेशा है , तुम्हारी रोज़ी है , इसी पर तुम्हें निर्भर रहना पड़ता है । और भी बताऊं ? ... इसलिए ले जाओ कि मेरी पार्टी में , मेरे एक नालायक दोस्त ने शराब के नशे में तुम्हें ज़ख्मी कर दिया था । इसलिए ले जाओ कि तुम्हें उस ज़ख्म के कारण महीने-भर खाट पर पड़ा रहना पड़ा । इसलिए ले जाओ कि यहां नहीं तो खुदा के यहां मुझे तुम्हारे इस हर्जाने की क़ीमत अदा करनी पड़ती । इसलिए ले जाओ कि मैं तुम्हारा कसूरवार हूं , इसे ले जाने से मेरी आत्मा का एक बोझ उतर जायेगा ।" 9।

<u>5. कथोपकथनों की संक्षिप्तता :</u> उपन्यास में पात्र होते हैं , अतः उनकी बातचीत के रूप में कथोपकथनों का आना स्वाभाविकता में अभिवृद्धि करता है । इन कथोपकथनों से उपन्यास में नाटकीयता का समावेश होता है । कथोपकथन जितने संक्षिप्त और अर्थपूर्ण हों उतने ही उत्तम समझे जाते हैं । ऋषभजी के लेखन में भी ऐसे कथोपकथनों के उदाहरण स्थान-स्थान पर मिलते हैं । यहां एक उदाहरण दिया जा रहा है । "भाई" उपन्यास में रामसनेही गुस्से में आकर खीर की थाली सरूपी के मुंह पर दे मारता है । रामसनेही का यह कार्य ठीक नहीं था , अतः उसकी पत्नी उसे समझाती है कि उसे अपनी भौजी सरूपी [illegible] से क्षमा मांग लेनी चाहिए । रामसनेही उसके लिए तैयार नहीं होता । तब दुर्गा उसे अपने जेठजी की

क्षमा माँगने पर कैसे सहमत कर देती है, यह निम्न कथोपकथन में दिया गया है। इससे दुर्गा के चरित्र पर भी प्रकाश पड़ता है और आगे जो कथा-प्रसंग होने वाला है, कथा उस ओर अग्रसरित होती है। यथा --

"अच्छा, एक काम करो।"

"क्या?"

"..... उसमें कुछ अपमान नहीं है।"

"क्या?"

"अपने भाई से क्षमा माँग लो।"

"भाई से? ..... इसकी क्या जरूरत?"

"बस, इसकी जरूरत पीछे मालूम हो जायेगी। तुम्हें मेरे सिर की कसम, इस बात के लिए नाहीं ना करना।"

"नाहीं तो ना करूं, पर इससे होगा क्या? सिंभू का कुछ अपराध मैंने थोड़ा ही किया है, जिसकी क्षमा माँगूं।"

"नहीं, मैं जैसे समझाती हूं, वैसे करो। तुम्हें मेरी कसम।"

"इससे होगा क्या?"

"कुछ भी हो, तुम्हें मेरी कसम!"

"...... अच्छा, सोचूंगा।"

"नहीं सोचना-विचारना कुछ नहीं; अभी जाओ।"

"अभी?"

"हां, अभी।"

"वह तो सहर गया है; रात को आएगा।"

"...... । सरूपी से नहीं मांग सकते?"

"अरे, राम का नाम लो! उससे ...."

"अच्छा जेठजी से मांगोगे?"

"देखा जायगा; अभी तो वह है नहीं।"

"नहीं, मेरी कसम खाओ, उनसे मांगोगे।"

"पर मैं कहता हूं, इससे कोई लाभ नहीं।"

"नहीं, मैं जो कहती हूं।"

"अच्छा।"

"अच्छा क्या?"

"क्षमा माँगूँगा बाबा।"

"मेरी कसम खाओ।"

"तुम्हारी कसम माँगूँगा; जो कहोगी, करूँगा।" [92]

इस प्रकार के कथनोकथनों से उपन्यास की कथावस्तु में नाटकीयता आती है। इससे चरित्र प्रकाशित होता है। उपन्यास की कहानी में विश्वसनीयता का गुण आता है।

6. कथोपकथनों में पात्रानुरूप भाषा का प्रयोग : उपर्युक्त विवेचन में पात्र और परिवेश तथा पात्र के चरित्र-चित्रण में भाषा के योग से सम्बद्ध चर्चा हो गई है। यहां पर केवल कथोपकथनों में प्रयुक्त भाषा से ही हमारा आशय है। यह तो एकाधिक बार कहा जा चुका है कि उपन्यास में कथोपकथनों की भाषा मानक भाषा या लेखकीय भाषा न होकर पात्रों की — लोगों की भाषा होती है और अतएव लेखक का जितना अधिक लोगों से संपर्क होगा, उसके द्वारा प्रयुक्त भाषा उतनी ही जीवन्त होगी। वस्तुतः कथा-साहित्य का लेखक जीवन्त भाषा को लेकर चलता है, मृत भाषा को नहीं। यहां इस मुद्दे की चर्चा कुछ उदाहरणों के परिप्रेक्ष्य में करने का उपक्रम है।

"कौड़ियों का हार" कहानी में लेखक ने चुन्नी नामक एक भंगी चरित्र को लिया है। चुन्नी और कथा-नायक "मैं" में बड़ी गहरी दोस्ती है। जब कथा-नायक कई वर्षों बाद गांव आता है, तब चुन्नी उससे कहता है — "आड़ी, आज ऐसी बात करते हो? वह बखत भूल गए? हाय रे दुनिया!" फिर एक ठण्डी सांस लेकर वह आगे कहता है — "आड़ी, जाती बेर के सब वादे भूल गए? तुमने एक कागज भी न लिखा। मैं यहां किसीसे पढ़वा लेता।" [93]

चुन्नी के कथोपकथन में जो भाषा प्रयुक्त हुई है; वह उसको

जाति , परिवेश व शिक्षा के अनुरूप है । "आड़ी" , "बेर " , "बखत" "कागज" जैसे शब्दों का प्रयोग लेखक ने इसीलिए किया है ।

"दान" कहानी में एक धूर्त प्रकार के साधु-संन्यासी का रामचन्द्र नामक चरित्र से वार्तालाप आता है । रामचन्द्र धर्मभीरू व्यक्ति है । अतः वह जटाधारी संन्यासी उसे अपनी लच्छेदार बातों में फांसता है । यथा— संन्यासी कर्कश स्वर में बोला — " बोल , साधु की इच्छा पूरी करेगा ? " रामचन्द्र सहमकर बोला — " कहिये क्या है महाराज ? " संन्यासी ने इधर-उधर देखा । सड़क पर कोई न था । फिर वैसे ही कर्कश स्वर में बोला — " तेरे मुंह में कृष्ण का नाम है । संन्यासी की इच्छा तू ही पूरी कर । तेरा कल्याण होगा । " रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर कहा — "कहिए न महाराज । " "संन्यासी के भंडारे के लिए तुरंत सवा रूपया दे दे । " फिर संन्यासी ने आँखें निकालकर कहा — " तेरी जेब में है , देख , अभी निकाल ; कल्याण होगा । " रामचन्द्र क्षण-भर को ठिठका , तो संन्यासी ने जमीन पर बैठकर पैर पटककर कहा— " नहीं देता ? अच्छा , ले जाता हूं , याद रख , तेरा सर्वनाश हो जायेगा ? " [94] प्रस्तुत संवाद में लेखक ने पात्रानुरूप भाषा का प्रयोग बखूबी किया है ।

अपने यहां के शिक्षित लोगों में अंग्रेजी बोलने का एक फैशन-सा है । कई बार तो दूसरों को प्रभावित करने के लिए अंग्रेजी का जान-बूझकर प्रयोग किया जाता है । दूसरे पंडित-पुरोहित टाईप के लोग यदि अंग्रेजीदां हो तो उसका प्रयोग करना कभी नहीं भूलते । "संयोग " कहानी के शास्त्रीजी अंग्रेजी में बोलते हैं — "बट माइण्ड , इट इज़ एब्सोल्यूटली कोन्फिडेन्शियल । " इस अचकन तिलक धारी के मुंह से अंग्रेजी सुनकर कहानी -नायक ब्रजमोहन अचरज में पड़ गया । फिर बोला — " इजुण्ट मैटर . " [95] यहां पर भी लेखक ने भाषा के प्रयोग में पात्र तथा उनके मानसिक स्तर का ध्यान रखा है । इतना ही नहीं, पात्र का मनोविज्ञान भी स्पष्ट हुआ है ।

"सत्याग्रह" उपन्यास में लेखक ने एक स्थान पर पुलिस-सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० एलेक्जेण्डर की पत्नी तथा गांधीजी के बीच हुए संवाद को रखा है । दक्षिण-अफ्रिका के गोरों ने गांधीजी के दक्षिण-अफ्रिका प्रवेश पर उनसे दुर्व्यवहार किया था । यहां जो संवाद है , उनसे इन सभी पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ा है ।

" एक गोरे ने चिल्लाकर कहा — " हट जाओ , मैडम , इस कुत्ते के साथ न रहो । हम इसे मार डालेंगे । " दूसरे ने कहा — "हम इसकी लाश के टुकड़े-टुकड़े कर डालेंगे । " तीसरे ने कहा — हम इसे आठ सौ कुत्तों को चढ़ाकर लाने का मज़ा चखायेंगे । " .... चलते-चलते मिसेज एलेक्जेण्डर ने पूछा — " आपने अकेले जहाज से उतरने का साहस कैसे किया ? क्या आपको नेटाल के वायुमण्डल की सूचना नहीं मिली थी ? " गांधीजी ने कहा — " मिली थी , मि० एस्कम्ब ने मुझे पत्र लिखकर पहले ही सूचित कर दिया था , और सलाह दी थी कि मैं रात को मि० टैटम के साथ चलूं — " "फिर ? " "मि० लाटन , मेरे मित्र — वहां गये , और विश्वास दिलाया कि गोरे तितर-बितर हो गये हैं । मैं अपनी जिम्मेवारी पर आपको साथ ले चलता हूं , और वायदा करता हूं कि मेरे रहते आप पर कोई आंच न आने पायेगी । " "तो यों कहो कि यह विष मि० लाटन ने बोया और उन्हीं के विश्वासघात से — " गांधीजी ने चौंककर कहा — " न । न । विश्वासघात क्यों ? " "फिर क्या ? " "देखिए , उन्होंने जो वचन दिया था उसको अक्षरशः पूरा किया । जब तक वे मेरे साथ रहे , मेरा बाल बांका न होने दिया , मगर जब दो गोरे उन्हें आकर ले गये तो मेरे ऊपर हुए प्रहारों के लिए वे जिम्मेवार क्यों ठहराये जायं ? बल्कि मैं नहीं कह सकता — मेरे कारण उन्हें क्या तकलीफ़ उठानी पड़ी । " मिसेज़ एलेक्जेण्डर ने श्रद्धालु नेत्रों से एक बार गांधीजी को देखा और सहसा उनके मुंह से निकल पड़ा — यह क्या ? मसीह ने जन्म ग्रहण किया है ? " [96]

7. <u>सांकेतिकता :</u> सांकेतिकता भी भाषा का एक महत्वपूर्ण गुण है । लेखक को पाठक की प्रबुद्धता पर थोड़ा विश्वास होना चाहिए । डा. सुरेश दलाल (गुजराती के प्रसिद्ध कवि-विवेचक) ने सन् 1994 के दीपोत्सवी अंक में×कविता×के (कविता-पत्रिका) में कविता के सन्दर्भ में लिखा है कि "छिपा-छिपा कर लिखने की कला ही कविता है । "[97] इसे कथा-साहित्य के सन्दर्भ में भी उतना ही सत्य समझना चाहिए ।

"निग्रह" कहानी के रामदेव संतति-नियमन के चक्कर में पहले तो बच्चा गिरवा देते हैं, परंतु बाद में वे बच्चे के लिए तरस जाते हैं । सभी प्रकार के उपाय आजमा लिये जाते हैं । अन्त में एक सिद्ध स्वामीजी जिनकी उम्र डेढ़ सौ वर्ष बताई जाती है और जो सौ वर्ष तक हिमालय में तप करके आये हैं, उनके पास रामदेव की पत्नी को भेजने का तय होता है । इस प्रसंग का बड़ा ही सांकेतिक चित्रण लेखक ने किया है — "उनकी कीर्ति सभी सुन चुके हैं, लेकिन राम-देव से कौन कहे ? क्या वह रात-भर बहू को छोड़ेगा ? दादी, बुआ, मां, बहू, और खुद रामदेव मन-ही-मन इस सवाल का जवाब ढूंढने में व्यस्त हैं । ... आखिर बहूजी एक दिन हिम्मत कर गईं । राम-देव ने पहले तो झिड़क दिया, फिर टाला, लेकिन अब तो न-जाने कैसे मां, बुआ, दादी, सभी को हठ करने की हिम्मत हो गई । क्या रामदेव इस संयुक्त आक्रमण को सहन कर सकते थे ? ... थे तो कोई सिद्ध पुरुष; क्योंकि ठीक नौ महीने बाद रामदेव के घर पुत्र-जन्म हो गया । बड़ी खुशियां मनाई गईं । अब सब कोई सुखी है और सबकुछ ठीक है; सिर्फ लाला रंगीलाल ने उनके घर का पानी पीना छोड़ दिया है । "[98]यहीं पर कहानी का अंत हो गया है ।

"सुधार की खोज" कहानी का अंत भी इसी प्रकार की सांकेतिकता को अभिव्यक्त करता है । इस कहानी के नायक पर एक धुन सवार है । वह किसी मजबूर और मगलूब वेश्या से विवाह करना पहxx

चाहता है । उसका यह भूत उतारने के लिए उसके ताऊजी एक कोठेवाली से मिलकर जो योजना तैयार करते हैं , उसका रहस्य-स्फोट कहानी के अंतिम वाक्यों से होता है । यथा -- " मां ने जो लड़की पसंद की थी , उससे सुधाकर का ब्याह हो गया ... । ताऊजी ने सौ रूपये का एक सुरक्षित नोट बहू को मुंह दिखाई में दिया । " [99] अंतिम वाक्य में "सुरक्षित नोट" शब्द-प्रयोग पर ध्यान देने की आवश्यकता है । यह वही नोट है जो सुधाकर ने सुन्दर को दिया था और बाद में सुन्दर ने यह नोट उसके मुसलमान दलाल को दे दिया था । अंतिम वाक्य से यह रहस्य खुलता है कि ताऊजी ने ही सुन्दरबाई के कोठे पर उस मुसलमान दलाल का रोल अदा किया था ।

8. व्यंग्यात्मकता : उपन्यास की गणना ही "लिटरेचर आफ डिस्कार्ड" में होती है और हिन्दी का उपन्यास तो विकसित ही नवजागरण काल के पश्चात् हुआ है , अतः समाज में दृढ़-मूल रूढ़ियों और परंपराओं -- जो उसके विकास में बाधक थी --का विरोध तो उसका मुख्य स्वर रहा है । और जहां विरोध करना हो वहां व्यंग्यात्मक भाषा एक हथियार का काम देती है । बालकृष्ण भट्ट , लाला श्रीनिवासदास , मेहता लज्जाराम शर्मा , मन्नन द्विवेदी, उग्र, अश्क , प्रेमचन्द , नागार्जुन , रेणु आदि सभी औपन्यासिकोंने इसका भरपूर प्रयोग किया है । ऋषभचरण जैन ने तो अपने कथा-साहित्य के द्वारा समाज पर पड़े सभ्यता के आवरण को हटाने का मानो बीड़ा-सा उठाया था , अतः उनके लेखन में तो यह व्यंग्यात्मकता विशेष रूप से पाई जाती है ।

"हिज़ हाइनेस" उपन्यास के प्रारंभिक "प्रवचन " में ही हमें यह व्यंग्यात्मक टिप्पणी मिलती है -- " मैंने "देशी-नरेश " नामक पदार्थ का मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया है और मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि देशी नरेश संसार का एक ऐसा आश्चर्य है , जो जितना नया है , उतना ही पुराना है । नया इसलिए कि देशी नरेश की

मनोवृत्ति नये आदमी के लिए एक अनोखी चीज है और पुराना इसलिए कि पिछले एक हजार वर्ष के पूंजीवाद के युग में इसी रूपरेखा और मनोवृत्ति के लोगों का संसार के हरेक देशों में के इतिहास में उल्लेख मिलता रहा है और आज भी दुनिया का करीब-क़रीब हरेक मुल्क मानवता के इन नमूनों से भरा हुआ है । अधिकार , पूंजी , आराम और अशिक्षा के सम्मिश्रण से जो चीज़ पैदा होती है , और जिसका उल्लेख सोलहवीं सदी के फ्रांस , उन्नीसवीं सदी के इंग्लैंड और बीसवीं सदी के अमेरिका के इतिहास में मिलता है , हमारे देशी नरेश उन्हीं के मिलते-जुलते रूप हैं । इन लोगों में उक्त चार महादोषों के×अल× अतिरिक्त एक और महादोष मिला हुआ है -- गुलामी । " 100

इसी उपन्यास में हिज़ हाइनेस का जो वक्तव्य है , उसमें भी व्यंग्यात्मकता का पुट है । एक तरफ वे कहते हैं कि अगर वे चाहें तो अपने लोगों के घरों में आग लगवा दें , उनकी बहू-बेटियों-बहनों पर कुत्ते छुड़वा दें , उनके बच्चों को जीता जमीन में गड़वा दें ; और दूसरी तरफ यह भी कहते जा रहे हैं कि वे बड़े रहमदिल हैं , गरीबनिवाज़ हैं , प्रजापालक हैं । " मेरे रास्ते में बाधा मत दो । मेरे कार्य-कलाप की टीका-टिप्पणी मत करो । मैं बड़ा बुद्धिमान हूं -- साक्षात् ईश्वर हूं , उसका अवतार हूं । ... मुझे यह सबकुछ करने का अधिकार है । तुम अपने काम से काम रखो , मेरी इन हरकतों की तरफ देखो नहीं , देख भी लो तो नाक-भौं न चढ़ाओ , नाक-भौं भी चढ़ाओ तो जबान मत खोलो , जबान भी खोलो तो मेरी तारीफ़ करो , मेरी प्रशंसा के गीत गाओ , मेरी जय-जयकार करो । मैं राजा हूं । .... उनका ख़याल है कि अगर उनके वलीअहद मेरे कृपापात्र बने रहें तो तब , जब वे खुद लुढ़क जाएंगे तो उनके परिवार का राजकीय सम्मान अनायास ही अक्षुण्ण रह सकेगा । यह सम्मान का मोह ही तो उन लोगों को मजबूर किए रहता है । बेचारे खुद सारी ज़िन्दगी बिना कौड़ी-पैसा लिए मेरी नौकरी

करते रहते हैं और साथ ही अपने वंश-भर के कमरपट्टे पर गुलामी का दस्तावेज़ लिखवा देते हैं । यही तो भेद है मेरी कूटनीति का और इसीलिए तो मैं कहता हूं कि मैं राजा हूं , मुझे राजा होने का अधिकार है ; क्योंकि मैं राजनीति का पंडित , अर्थशास्त्र का आचार्य , शासन-कार्य का उद्भट नायक और बड़ा तिकड़मी जीव हूं । लोग समझते हैं कि मैं दूसरे राजाओं की तरह बेवकूफ़ , रूपया बरबाद करने वाला और नासमझ हूं । लेकिन मैं क्या हूं -- यह तो मैं ही जानता हूं । " [101]

"ज़नानी सवारियां" का रामजी बुर्दाफरोश है । लोगों को चूना लगाना ही उसका काम है । अल्मोड़ा से पचास रूपये में एक छोकरी लाया था , नवाब से उसी लड़की के आठ हजार रूपये वसूल किये । एक लाला के पूछने पर कि क्या आज तक कोई सौदा घाटे का हुआ या नहीं , रामजी तपाक से बोल उठते हैं -- "उस निरंजन की मेहरबानी से अभी तक नहीं । आखिर रोज शिवाले जाता हूं , पूजा करता हूं , जमना नहाता हूं । उसका भी कुछ परताप है या नहीं ? " [102] हमारे भगवान और देवी-देवता कहां-कहां और कैसे-कैसे लोगों के काम आते हैं ।

रामजी अपने इस पेशे को रोजगार बताता है । तब लाला तर्क देता है कि रोजगार है तो फिर इसे कानून के खिलाफ़ क्यों ठहराया गया है । रामजी का उत्तर हमारी सरकार, कानून और व्यवस्था सबके मुंह पर एक करारा तमाचा है -- " क़ानून क्या है ? सरकारी हथकण्डा । सरकार क्या है ? लुटेरे बनिये । इसकी आपने भली चलाई । जनाब , सरकार हम सबसे ज्यादह लुटेरी है । यों तो दिवाली पर कौड़ियों की हार-जीत पर रोक-थाम लगती है और यों घुड़दौड़ के मैदान में लाख के घर खाक में मिल जाते हैं तो सरकार की बला से । यों सरकार अपने प्रजा-प्रेम का ढोल पीटती है । और यों लाखों मन शराब खुले-

आम आती है और बिकती है । बताइये इसमें क्या भेद है ? यही कि सरकार की जेब गर्म होती है । भाई साहब , हमारा रोजगार ऐसा है कि इसका हिसाब रखने के लिए चुंगीघर मुकर्रिर करना सरकार के लिए मुमकिन नहीं है , वर्ना कैसा कानून और कैसी सरकार ? " [103]

"तीन इक्के" के बाबा हीरादास उर्फ स्वामी नित्यानंदजी एक नंबर के गंजेड़ी , शराबी-कबाबी , लुच्चे-लफंगे और छटे हुए बदमाश तथा घाघ आदमी हैं । लेखक ने उसका व्यंग्यात्मक चित्रण किया है -- " बाबा हीरादास अभी-अभी अखिल×क×× भभूत का " पेण्ट " मुकम्मिल करके चुके हैं । धरमदास सुल्फे की एकदम ताज़ी चिलम उनके सामने जमा कर धर गया है और बाबा हीरादास पेट पर हाथ फेर रहे थे कि सहसा धरमदास ने दौड़ते हुए आकर सूचना दी कि दयाशंकर और मुरारीलाल आ रहे हैं । " [104]

इसी उपन्यास में मुरारीलाल बाबा हीरादास के सम्मुख अपनी एक प्रार्थना रखता है कि उसकी माताजी उनके दर्शन करना चाहती हैं । उस समय लेखक ने बाबा हीरादास के मनोभावों का जो चित्रण किया है उसमें ऐसे ढोंगी साधु-बाबाओं के प्रति व्यंग्य-भाव प्रच्छन्न-रूप में मिलता है । यथा -- "बाबा हीरादास के भाव में अब भी अन्तर न पड़ा । मुरारीलाल के सामने खुलना उनकी नीति के अनुसार अब भी निरापद न था । जब तक चिड़िया में जान रहती थी , उसे निचोड़ा जाता था और इस क्रिया में हर्गिज उसके सामने अपना असली रूप प्रकट न किया जाता था जब तक चिड़िया की जान निकल जाती थी । तब या तो उसे मंडली से बाहर निकाल फेंका जाता था , या फिर मंडली के चरों में दीक्षित करके उससे दूसरी चिड़ियाएं फंसाकर लाने का काम लिया जाता था । अभी मुरारीलाल की जान का बहुत ही नगण्य अंश निकला था और इसीलिए बाबा हीरादास अब भी उसके सामने अपनी मक्कारी त्यागना उचित न समझते थे । ... बाबा हीरादास ने मुरारीलाल की बात सुनी तो

परमहंस-भाव से झोंपड़ी की छत की तरफ़ सर उठाकर कह दिया --
" भगत के बस में हैं भगवान । " [105]

"दान" कहानी का तो समूचा विषय-वस्तु ही व्यंग्यात्मक है, पर कहानी के अंत में व्यंग्यात्मकता की चरम-सीमा आ जाती है, जहां भिखारी, संन्यासी, अनाथाश्रम का डेपुटेशन इन सबके चंगुल में न फंसने वाले हुकूमतराय कमिश्नर की चिट्ठी के सामने हंसी-खुशी हलाल हो जाते हैं और एक हजार रूपये का चैक काट देते हैं--
" इस छपी हुई चिट्ठी को रायबहादुरी के स्टेशन का फ्रि टिकट समझकर रायसाहब उसी वक्त एक हजार रूपये का चैक " थैंक्स-गिविंग-फंड " में भेजने की व्यवस्था xxxxx करने लगे । " [106]

9. भाषा में कहावत-मुहावरों के प्रयोग : भाषा में कहावत और मुहावरों के प्रयोग से एक सजीवता, प्रवाह और रवानी आ जाती है । साथ ही यह भी तय है कि जो लेखक जितना ज्यादा लोगों में रमा हुआ होगा, उसकी भाषा में इनका प्रयोग उतना ही ज्यादा होगा । कहावत में हमें लोक-जीवन के अनुभवों का सामान्यीकृत रूप मिलता है । मुहावरों में भाषा की बिम्बात्मक छटा दृष्टिगोचर होती है । ऋषभचरण जैन प्रेमचन्द-युग के लेखक हैं और इस युग के लेखकों की भाषाशैली में कहावत-मुहावरों के स्वाभाविक प्रयोग सहजतया मिल जाते हैं । यहां उनकी कतिपय रचनाओं से कुछ कहावतों और मुहावरों को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है :--

कहावत		उपन्यास		पृष्ठ
(1) न माया मिली न राम	:	जनानी सवारियां	:	21
(2) काठ की हांड़ी एक मर्तबा चढ़कर रह जाती है	:	"	:	21
(3) जैसा गुड़ डालोगे वैसा मीठा होगा	:	वही	:	25
(4) इन्सान टके की हांडी भी ठोक बजाकर लेता है	:	वही	:	27

§5§ धेले की हंडिया और टका घुलवाई का : जनानी सवारियां: 84

§6§ प्रीति करि काहू सुख न लह्यौ : तपोभूमि : 73

§7§ आज मरा , कल दूसरा दिन : चम्पाकली : 35

§8§ अंधों में काना सरदार : हिज़ हाइनेस : 15

§9§ जब तक जीना तब तक सीना : भाई : 28

§10§ एक चुप सौ को हराती है : वही : 36

§11§ गाली जिस मुंह से निकलती है , उसी को गंदा करती है :वही: 37

§12§ कर भला, हो भला , अंत भले का भला : वही : 37

§13§ मां डायन होगी तो क्या पूत को खा जायेगी : वही : 40

§14§ पासा पड़े अनाड़ी जीते : वही : 51

§15§ बाप ने मारी पीदड़ी , बेटा तीरंदाज : वही : 51

§16§ आगे नाथ न पीछे पगहा : वही : 60

§17§ बुजदिल की दुम में रस्सा : वही : 61

§18§ घर घर मटियाले चूल्हे हैं : वही : 65

§19§ बखत निकल जाता है , बात रह जाती है : वही : 83

§20§ दूर के ढोल सुहावने होते हैं : वही : 84

§21§ बिना घरनी घर भूत का डेरा : वही : 86

§22§ जिसने न पी सुल्फे की कली , उस लड़के से लड़की भली : तीनइक्के:49

§23§ बाल-जती , कर गती : वही : 63

§24§ गरीब की बात बासी हुए बिना मीठी लग ही नहीं सकती:वही: 76

§25§भेदिये ने भेद दिया , दुश्मनों ने दुश्मनी निकाली : भय : 20 107

§26§ हाथी की मांद भी बड़ी गहरी होती है : दुनियादारी : 40

§27§ जरा-सी देर में दूध-सी चादर काली हो जाती है : स्वर्गकीदेवी:49

§28§ जहाज के भंगी भी मल्लाह कहलाते हैं : संयोग : 79

§29§ बांबी में घुसते वक्त सांप को भी सीधे होना पड़ता है : पांच रूपये का कर्ज : 125

§30§ जिस गांव जाना नहीं उसके कोस गिनने से क्या लाभ:सुधारकीखोज: 150

§31§ जिन ढूंढा तिन पाइयां : वही : 152

§32§ रस्सी जल गई पर एंठ बाकी है : निग्रह : 159 ।

ऋषभचरण जैन की गद्यशैली में मुहावरों का प्रयोग तो बहुतायत से मिलता है । यहाँ उनकी कुछेक रचनाओं से कुछ मुहावरों को उदाहरण-स्वरूप दिया जा रहा है :--

<u>दान तथा अन्य कहानियाँ :</u>

उतरा हुआ घड़ा बन जाना , घर को सोने से भर देना , लाख की दौलत का राख हो जाना , किसी की जड़ छिलने में कसर न रखना , छाती पर मूंग दलना , पाँचों ऊंगली घी में होना , तीन-पांच हो जाना , किसीकी बात का बावन तोले पाव रत्ती होना , जहाँ सींग समाए वहाँ रहना , कट-कटके निकलना , इमली के पत्तेपर दण्ड पेलना , बाल बराबर भी फर्क न पड़ना , मिलकर घी-खिचड़ी हो जाना , मिट्टी खराब करना , सख्त-सुस्त कह डालना , काठ का उल्लू , जान का बबाल कटना , पेट में पानी का न पचना , सूखा पेड़ होना , चुल्लू भर पानी में डूब मरना , किसीमें लाल का लगना , क्रोध से बिलबिलाना । [108]

<u>हर हाइनेस :</u>

एक के तीन या चार करना , कलेजा मुंह को आ जाना , डूबते को तिनके का सहारा , पौ बारह होना , हुक्म-उदूली करना, भौंरे बनकर चारों ओर फिरना , किसीका नूरे-नज़र होना , अजब धजा का होना , छल्ला-छल्ला बिक जाना , माशे-माशे भर का कदम रखना , ज्योंत-ब्योंत बिठाना , आफत का परकाला होना, नज़र करना , जी खोलकर खर्च करना , शिगूफा छोड़ना , तबियत के उदार होना , लोहे पर सोने का पानी चढ़ाना ,उंगलियों के इशारे पर नचाना , चैन की सांस नसीब होना । [109]

<u>मयखाना :</u>

आसमान पर थेगली लगाना , दवा का लुकमान हकीम के पास भी न होना , मुर्दों का-सा मुंह बनाना , पैर का मानो रेंगते हुए सांप पर पड़ जाना । [110]

चम्पाकली :

बात पर हाशिया चढ़ाना , नैन मुताना , हाशिया-आराई करना , ढकोसलावाद चलाना , रईसी में घुन लगना , लड़ने-मरने पर उतारू होना , गले लगाना , नस-नस का गुदगुदा उठना , किसीके ख्वाबगाह में जाना , चिनचिनाकर कहना , किसीकी दाश्ता बनना , उदासी के दरिया में डूबना-उतराना , नागवार गुजरना , जादू-सा हो जाना , समाज में फेलों का होना , केंचुली बदलकर कहना, चेहरा जर्द पड़ जाना । 111

हिज़ हाइनेस :

हजार जान से फिदा होना , लहालोट हो जाना , xxxx× कलेजे का बांसों उछलना , दर्द का काफूर हो जाना ,धज्जियां उड़ा देना ,शब्दों से शहद के फव्वारे छूटना , किसीके नूरे-नज़र होना , भावनाओं का इंजेक्शन देना ,लाल बुझक्कड़ बनना , शशो-पंज में पड़ना, अंगुस्तनुमाई करना , दाम-फरेब के शिकार होना ,नीमबाज़ आँखों से देखना , रंग चढ़ाना , धूल-धूसरित हो जाना , कदम-बोसी के लिए हाजिर होना । 112

भाई :

साईं-सूती रोटी निमट जाने देना , लंका बनकर आना , चून का पुतला होना , माथे पर मैल का न होना , पेशाब खता होना , बुद्धि पर पत्थर पड़ जाना , जख्म पर नमक छिड़कना , रार मोल लेना , खून का घूंट पीकर रह जाना । 113

तीन इक्के :

गंगा-जली उठवा लेना , अंधे का दीपक और लंगड़े की लकड़ी होना , ऐश्वर्य का पैरों तले लोटना , इन्द्रासन का भी हेय होना , ऐसी सफलता कि जिसमें सींक खड़ी रहे , किसी खेत की मूली होना , आंच न आने देना , नहले पर दहला देना , बांसों उछलना , मारे-मरे जिये-जिलाये , बना-बनाया महल ढहा देना , आशा-लता पर

जिसमें सींक खड़ी रहे , धैर्य के बांध का टूट जाना ।[114]

ज़नानी सवारियाँ :

चूना लगाना , पांचों घी में होना , ~~लख~~ लाख के घर का खाक हो हो जाना , जेब गर्म होना , गधे के पिशाब से मूँछें मूंडा लेना , गूलर के फूल होना , झांसा-झप्पा देना , तुझ-मुझ की सिखावट में आ जाना , बड़े गहरों में होना , माल इक्कीस रहना , बाग-बागन हो जाना , आव देखना न ताव , सटक-सीताराम हो जाना , लुटिया डूबो देना , दुनिया का हज़रत होना , आंखों सुख और कलेजे में ठण्डक होना , बड़े पतले वक्त पर मदद करना , तुर्की-ब-तुर्की जवाब देना , एंडी-बेंडी बात निकल जाना , जबान कैंची की तरह चलना ।[115]

उपर्युक्त उदाहरणों से ऋषभजी की भाषा में जो मुहावरेदानी है , वह प्रमाणित होती है । कहावतों के जो प्रयोग उन्होंने किए हैं , उससे यह सिद्ध हुए बिना नहीं रहता कि उनका जन-जीवन से गहरा संपर्क था ।

10. नवीन भाषाभिव्यंजना : यदि कोई भी लेखक वही भाषा देता है जो उसे परंपरा में मिली है , तो उसका अपना कर्तृत्व क्या , यह एक प्रश्न उठ सकता है । लेखक की महानता और विशेषता का एक पयमाना यह भी होता है कि उसने अपनी परंपरागत भाषा को कितने नये आयामों से युक्त किया है । नवीन शब्दों का प्रयोग , पुराने शब्दों का नवीन ढंग से प्रयोग , नये विशेषण , नये रूपक , नवीन उपमानों का चुनाव आदि भाषा को एक नवीन अभिव्यंजना प्रदान करता है । नये रूपकों में जहर की गांठ ,[116] प्रतीक्षा और धैर्य का बांध , शक का जहर , गुनाहों की लंका जैसे शब्द-समूह मिलते हैं[117] ; तो नये विशेषणों में सांप के फन जैसा मुंह ,[118] मैले दसन ललनारें , पाखाने में सने बालक , श्वेत महाप्रभु (अंग्रेज) जैसे शब्द -प्रयोग मिलते हैं ।

शब्द-विचार :

शब्द भाषा की सबसे छोटी सार्थक इकाई है । प्रभावी भाषा-शैली के लिए शब्द-चयन का विशेष महत्त्व है । यहां पर विशेषण , नये रूपक , नये उपमान , संस्कृत शब्द , ठेठ या सामान्य भाषा के शब्द , अरबी-फारसी के शब्द आदि शीर्षकों के अन्तर्गत उस पर संक्षेप में विचार किया जा रहा है । यहां एक और तथ्य ध्यातव्य रहे कि विशेषण या रूपक के अन्तर्गत विशेष या खास शब्दों को ही रखा गया है । भाषा में आम तौर पर ऐसे अनेक शब्दों के प्रयोग होते रहते हैं , परंतु यहां केवल उन शब्दों का चयन हुआ है , जिनका भाषागत सौन्दर्य से सविशेष सम्बन्ध रहा है ।

नये विशेषण :

रामलगती बात /13/ , तल्ख़ तजुरबे /26/ , बे-तोल नशा/59/, निहायत ख़ुशगवार /95/ ,नामर्द रूह /73/ , हसरातनाक दिन /74/, कशीदा ताल्लुकात /88/ ;[119] सलीमशाही जूते /9/ , विरक्तिपूर्ण दृष्टि /12/ , सर्कुलरनुमा पत्र /19/ , मारवाड़ियों का-सा मुंह /87/, मुहर्रमी बातें /99/ , पुष्पित भविष्य /111/ , व्यापारिक मुस्कान/119/, घरू मामला /159/ , सास-दण्ड /165/ , बीभत्स संकल्प /170/ ;[120] जर्द दांत /13/ , मलगजी खादी /56/ , विदेशी लोलुपता /4/ ;[121] शामी कबाब /6/ , सलीमशाही जूते /15/ , लहकाती हुई घास/53/, चन्दसाला ख़ूबसूरती /96/ , दुइयां सी जान /98/ ;[122] साफ़-गो आदमी /101/, मुहसिन प्रोफेसर /100/ , इन्सानी खस्लत /141/ , हमराह तख्लिया /224/ ;[123]साफ़-गो तबियत /12/ , बादशाही मिजाज /12/ , बेकस लड़की /13/ , सावन-भादों की धूप-सी हंसी /23/ , दस्तबस्ता अर्ज /42/ , दस्तबस्ता माफ़ी /53/ , बदजायका रतूबत /57/ , बेशबहा मोती /72/ , मिस्कीन चेहरा /84/ , अफसोसनाक केरियर /93/ , नीमबाज़ आंखें /96/ ;[124] अविचलित पाषाणता /33/ ,इन्द्रोपम सवारी /69/ ,उद्यत सहायता /120/

मैला शून्य /114/ ,जहरीला कटाक्ष /139/ , तल्लीन मुस्कराट/146/, लोमहर्षक पाप /186/ ;[125] दर्मियाना कद /9/ ,मलनुई ताकत /55/ , फाहिशा औरतें /61/ ,नत्थीशुदा कागज़ /123/ , फन्देदार जाल/145/, निरापद उपाय /153/ , इश्किया किताबें /163/ , ज़िन्दगी-नागहानी /164/ [1]^28^x , गर्हित जरूरत /191/ ।[126]

नये रूपक :

नवीन रूपकों के प्रयोगों से भी भाषा में एक तरोताजगी आ जाती है । यहां अश्कजी की कतिपय रचनाओं से ऐसे उदाहरण संकलित किए गए हैं । कोष्ठक में दिए गए अंक पृष्ठ-संख्या का द्योतन करते हैं :— आफत का परकाला /40/ , मुसीबत की सड़कें /41/ , मुलायमियत की धूप /86/ , गलतफ़हमियों का बवंडर /105/ ;[127] क्रोधका स्खलन /17/ , विचार-वाटिका /16/ , यादों की तख्ती /125/ , बधाई का गुलाल /134/ , हंसी-दिल्लगी का फव्वारा /140/ , कष्ट की ज्वाला /153/ , वाक्य-बाण /164/ , परिश्रम का गट्ठर /165/ ;[128] भंग-भवानी /64/ , शक का जहर/70/ ;[129] उदासी का दरिया /62/ , नर्क-कूप /71/ ;[130] महानता का फतवा /144/ , इज्जत का लेवा /146/ , क्रोध का गुब्बार /147/ ;[131] आशंका का मुंह /37/ , दृढ़ता की दारुणता /36/ , बुद्धि का चाबुक /38/ , प्रसन्नता का वितान /52/ , आत्मघात की पूंछ /113/ , संसार-तपोभूमि /138/ ;[132] मंगलमयी भावनाओं का इंजेक्शन /80/ , शैतानियत का भूत /137/ , बात का इंजेक्शन/146/, कोप-नाटक /149/ ;[133] ।

नये उपमान :

अपने कथन को प्रभावशाली बनाने के लिए हम बात-बात में अनेक उपमाओं का प्रयोग करते हैं कि कई बार उसका पता भी नहीं चलता है । यहां केवल ऐसे उपमानों का उल्लेख हुआ है जिनमें कुछ

नाविन्य लक्षित हुआ है :- छपी हुई चिट्ठी = रायबहादुरी के स्टेशन का टिकट ; प्रशंसा = पक्की रसीद {दान तथा अन्य कहानियां, पृ. क्रमशः 19, 35} ; अंग्रेज = श्वेत महाप्रभु {तीन इक्के, पृ.4} ; कुंआरी लड़की = कोरा लिफाफा, नयी लड़कियां = नये चालान {मयखाना, पृ. क्रमशः 60, 72} ; पैर = मलबूस केले के कटे हुए स्तून, किसी आदमी की आत्मा की हत्या करना = रंग चढ़ाना {हिज़ हाइनेस, पृ. क्रमशः 65, 146} ।

संस्कृत-शब्द :

संस्कृत प्रायः सभी भारतीय भाषाओं की जननी है, अतः उनमें संस्कृत के शब्दों का आना स्वाभाविक ही समझा जायेगा । हिन्दी में भी संस्कृत के अनेक शब्द आये हैं । लेखक अपने कथावस्तु, पात्र और परिवेश की दृष्टि से उनका प्रयोग करता है । यहां ऐसे कुछ शब्दों को उदाहरण स्वरूप दिया जा रहा है :-

गृहस्थ-धर्म, आवश्यकीय अंग, अभीष्ट, उद्दाम वासना, महर्षि, राजर्षि, क्रोध की प्रतिमूर्ति, महाराजाधिराज, समुद्री-प्रवाह, शुद्ध पर्वतीय, निर्निमेष, धन-धान्य, प्रबन्ध ; [134] धर्मभीरुता, विरक्तिपूर्ण दृष्टि, विचार-वाटिका, स्खलन, गतश्री, विभ्राट, क्षुभित, अयाचित, वयस्का, अन्यमनस्कता, विभीषिका, विश्वस्तता, मर्माहत, पुनरावृत्ति, धूल-धूसरित, पुष्पित भविष्य, उर्ध्व-गति, मृगनयनी, समाज-तिरस्कृता, वाक्य-बाण, द्विरागमन, बीभत्स संकल्प, महाशया, अभियोग ; [135] लोलुपता, श्वेत-महाप्रभु, दयार्द्र, आशा-लता, तुषारपात, लवलीन, अधोदशा, दूरीकरण, भंग-भवानी, निरापद, प्राणान्त ; [136] कुण्ठित, विहाग, मालकौंस, असावरी, बागेसरी, नर्क-कूप, वीणा-विनन्दित कंठ, षड्यन्त्र ; [137] जामाता, तुषारपात, मेधावी, औदार्य, अतुल स्नेह ; [138] दुर्भिक्ष, पारितोषिक, पतिप्राणा महारानी, द्रोह का आविर्भाव, गुण-ग्राहक, पालित, ज्योतिष-विद्या-विशारद, सूक्ष्मदर्शिता, अहम्मन्यता, निर्विवाद, ज्योतिषीवर, सहस्त्र स्वर्ण मुद्राएं, अक्षरशः,

कण्टक , शूल , सिंहासनासीन , शांतचित्त , सामर्थ्य , गोपनीय रीति, कठिनतम , अध्ययनशाला , विद्याध्ययन , संदिग्ध , पितृव्य /चाचा/ , धैर्यवान , नाशवान , निश्शंक , विक्षिप्त , भ्रष्ट-बुद्धि , राजमति , बालमति , दूरदर्शिता , प्रविष्ट , मृतक , जगदीश्वर , अनुकंपा , अधीनता, नियुक्त , प्रकाण्ड-विद्वान ;[139] उपक्रमणिका , आविष्कृत ;[140] कृषक , कुत्सित , वायुमण्डल , दुर्गन्धित , कार्यं वा साधयेयं , मानवोद्रित ;[141] मितभाषी , वज्रदन्त , यथा निहित , अव्याबाधिता , निर्लिप्तता, विलक्षणताएं , लोकोत्तराएं , परमुखापेक्षिता , अत्युत्कट , ग्रंथि-बन्धन , कुशासन , क्रूरता , निभ्रांति , नास्तित्व , मित्र वदाचरेत , क्षमाशीलक मातृत्व , उच्छिष्ट , संसार-तपोभूमि , पृथकत्व , भाव-विपर्यय , दुर्लंघनीय ;[142] कपोल , कुच , पुनर्मूषिकोभवेत , उद्भट सौन्दर्य , असूर्यमपश्या , आनंदोल्लसित , मनोमालिन्य , श्वेत-पक्ष , सौभाग्यशालियां , स्थैर्य , स्खलन , उपरोल्लिखित , सवैतनिक , ज्ञाताज्ञात , माया-मरीचिका , उच्चपदस्थ ;[143] ।

यहां यह ध्यातव्य है कि कहीं-कहीं लेखक ने संस्कृत शब्दों का हिन्दीकरण भी किया है , यथा - सौभाग्यशालियां , विलक्षताएं , लोकोत्तराएं आदि शब्दों में इस प्रवृत्ति को लक्षित किया जा सकता है ।

ठेठ और सामान्य भाषा के शब्द :

कथा-साहित्य में जहां ग्रामभित्तीय-परिवेश होता है , वहां लेखक यथा-संभव ठेठ व सामान्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग करता है । वस्तुतः किसी भी लेखक का अपने पात्रों की भाषा पर कितना प्रभुत्व है , उसका प्रमाण ऐसे ही शब्दों से मिलता है । ऋषभजी ने भी अनेक स्थानों पर ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है । यहां कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :--

सवारियां, फितूर , म्यां , ताब , ज्यादह , पनमेसुर , जरी मिलना , आवाजाही ;[144] रामलगती बात , बेंडा , जोबन , ज्योंत-ब्योंत बिठाना , रनवास , परकाला ;[145] पकाव , तलछट , दुहेज , तिहेज , धोंचू , पारबसाई , ज्यादे , आड़ी , छुटबछेरा , घरू-मामला,

मौसी-औसी , गट्ठर , ऐंठ , दुचन्द , मर्दुमी , छलछन्दिन , छैल-चिकनिये , हाट-हवेली ;[146] हार की खुश्की , जीत की तरी , फाटके बाजी , अजब धजा , गुण्डई , लुट्टस , फड़ , घुन्ना , भँग-भवानी , दुहत्थड़ ;[147] ढकोसलावाद , मर्दमी , परी-पैकर , फकीरनी, ज्यादे , दुलखना , टुइयां-सी जान ;[148] बेग़ुरु , भलमनसाहत , दुरस्त , साबिका , सरकश , गुस्सैल ; [149] खुशगवार , वक्तन-फवक्तन , आशना , बंगलिया , बछेरियां , दोस्तानियां , गाली-गुफ्तार , खानगियां , बुलाहट , चौधराइन , हब्बा-भर-फर्क ; [150] फूस , टुइयां-घुइयां , जानी-जूनी , घुन्नी सांपन , हिमायतन , भतेरे , पेट में दाढ़ीवाला , पड़तें , जबानदराजी , जनखा , फन्द-फरेब , तैने , हेठी , चून का पुतला , अन्याव , सील-सुभाव , सहर , तिफरका , सिच्छा , मसल, दिशा-फरागत , आरिया समाज , बिकट , चूतड़ , शानपती , बे-असूली , पीदड़ी , कैंची /कुश्ती का एक दांव / , फांस /कुश्ती का एक दांव / , वक्कल , गारत , मना-मनूकर , चोर-जिठानी , हिल्ला, मटियाले , बखत , पसर चराना , जोहड़ , आटेर , परासचित ;[151] रक़बा , पैरोकार, दुरदुराना , खामियाजा ;[152] लिथड़ना , कलखना, रिरियाना , बरगलाना , हितू , बवाल , बेकहे , बाट देखना;[153] दर्मियाना कद , गरीब-नवाज़ , किफायतशारी , पोचपन , भुनगा, चपरकनाती , शशोपंज , चहेतियां ;[154] ।

<u>अंग्रेजी के शब्द</u> :

ऋषभजी के कथा-साहित्य में प्रायः अभिजात-वर्गीय पात्रों का चित्रण हुआ है और इस वर्ग में अंग्रेजी वाक्यों तथा शब्दों का प्रयोग आम बात है , अतः उनकी कई रचनाओं में अंग्रेजी के शब्द यथेष्ट स्थानों पर आये हैं :— हर हाइनेस , व्हाइट होर्स /शराब/ , जानीवाकर /शराब/ , परफेक्शन /शराब/ , नीट , कम्पार्टमेण्ट , सलाद , पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट , फोर योर हेल्थ एण्ड हेपीनेस , मेनी थैंक्स , होरीबल , इट्स होरीबल योर हाइनेस , डिप्लोमसी, प्रेस्टिज़ , डिसिप्लिन , मिस्टरीयस पर्सनालिटी ; [155] एबसोल्यूटली,

कोन्फिडेन्शियल , डजण्ट मेटर , फोली , ब्यूज़ , ओवर-एज ; मोल्थजियन थ्योरी ;[156] री-टच , रोटेशन , पेइण्ट , बुकी ;[157] पेटेण्ट शू , कर्जन-फैशन ;[158] रीलक्टण्ट[159] ; थ्री चियर्स , गेस्ट , ओनर , प्रोनोट , कैरियर ;[160] बायकाट , सेशन जज ;[161] ट्रान्सवाल , आरेंज-फ्री-स्टेट , केप-कोलोनी , कार्लेण्ड ;[162] इण्टिग्रीटी , चार्जशीट , बायस्कोप ; [163] हिज़ हाइनेस , ब्लेक-मेल , कन्वैन्सिंग , डाइनिंग-रूम , शैम्पेन /शराब/ , निगेटिव , इण्टरव्यू , डिनर्स ; [164] ।

<u>अरबी-फारसी के शब्द :</u>

ऋषभजी के उपन्यासों में "मयखाना" , "चम्पाकली" , "हर हाइनेस" , "हिज़ हाइनेस" , "जनानी सवारियां" , "तीन इक्के " आदि उपन्यासों में मुस्लिम परिवेश आता है तथा उस समय के सामाजिक माहौल में भी अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग बहुतायत से होता था ; अतः अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयुक्त होना स्वाभाविक ही समझा जायेगा । यहां ऐसे कुछ शब्दों की फेहरिस्त दी जा रही है । प्रारंभ में रचना के नाम का उल्लेख किया गया है तथा कोष्ठक में पृष्ठ-संख्या के अंक को निर्देशित किया गया है ।

जनानी सवारियां : बुर्दाफरोश /9/ , फितूर /12/ , दोस्ताना /19/ , मगज़ज़नी /28/ , इम्दाद /29/ , मुंतजिर/38/, नमूदार/39/ , नायाब/48/ , उज़रत/55/ , महारत/54/ , ऐन खुशनसीबी /105/ , बे-एतबारी /99/ , दस्तयाब/86/ ; हर हाइनेस : हुक्म-उदूली /5/ , मशकूर /7/ , जिस्मानी ताकत /6/, जां-फेशानी /7/ , नूरे-नज़र /9/ , रफ़ा /8/ , वाकिफ़ /17/ , गरीबखाना /19/ , एतकाद /19/ , वाकफ़ियत /22/ , नियाज़/22/, फिलहाल/26/ , तल्ख तजुरबे /26/ , दोस्त अहबाब /27/ , बेआवाज़ /28/ , नकीब /28/ , मस्लहतन /28/ , मुस्तैदी/29/, अहबाब-मुसाहिब /31/ , मुस्तहक़ /38/ , क्यास /38/ ,

बा-सलीका /39/ , इज्जत-अफजाई /40/ , इखलाक़ /43/ , एहसानात /43/ , सरे-दस्त /44/ , वजूहात /44/ , एहतियात /45/ , ब-आसानी /46/ , नामा-निगार /46/ , शिगूफ़ा /47/ , आज़िज़/47/, बोसा/52/ , खिदमात /58/ , हरकात /59/ , मुस्तहक़ /59/ , जुरअत /59/ , इसरार /59/ , बजाहिर /62/ , तवक्को /62/ , खाविन्द /63/ , इबादतगाह /65/ , नुत्फ़ा /65/ , रफ्ता-रफ्ता/66/, महदूद/69/ , मकतूल/70/ , खातिरख्वाह /71/ , नुमाइन्दे /81/ , दीगर /88/ , अदम मौजूदगी /94/ , गर्दिश /96/ , कमसिन /102/, सर्फरोज़ /106/ , सरज़द /107/ , बिला वजह /107/ , कोफ्त /107/, मुहिम /107/ , रोजे-रोशन /108/ , अयां /108/ ।

<u>दान तथा अन्य कहानियां</u> : सलीमशाही /9/ , इन्तजारी/13/, दरे-दौलत /13/ , दौलतखाना /18/ , कदम-बोसी /18/ ,मुख्तसिर/18/, नीममुर्दा /29/ , तुफैल /30/ , किस्मत आजमाई /30/ , मुलाज़मत/32/, नातजुर्बेकारी /34/ , गजर-दम /50/ , फब्न /67/ , इमकान/67/, मुतफर्रिक /71/ , बेतरह /74/ , नज़ला /75/ , तयकीकात/77/ , जर्दकोब /79/ , इस्म-शरीफ /81/ , वल्दियत /81/ , मलामत/82/, रईसाना /86/ , गैर-मातबर /101/ , दुतर्फा /102/ , इल्लत /102/, उन्सियत /108/ , रोजनामचा /118/ , खाहिशमन्द /132/ , जिन्दा-दर-गोर /152/ ।

<u>तीन इक्के</u> : नफरतअंगेज़ /5/ , मशकूक /9/ , तहमद /13/ , दर्द-अंगेज़ /13/ , हाशिया-आराई /13/ , एतकाद /16/ , शोरे-पुश्ती /16/ , पेशतर /18/ , बयानात /19/ , कलमबन्द /19/ , हरमजदगी /20/ , जिल्लत /23/ , खराब-खस्ता/25/ , हिज़ाब/26/ , जिरह /28/ , मसरूफ /29/ , तफरीह /31/ , मसरूफियत /57/ , मिजाज-पुर्सी /57/ , रसूख /68/ , बदस्तूर /68/ , तबियतदारी /80/ , खुशअस्लूबी /55/ ।

<u>चम्पाकली</u> : बाजाब्ता /1/ , शामी कबाब /6/ , माहौल-बिला-

कूवत /8/ ,जईफी /21/ , मशक्कत /21/ , तमाशबीन /30/ , अस्मत-फरोशी /32/ , नापैद /38/ , इत्तफाकिया /38/ , तफसील /40/ , दाश्ता /56/ , मर्तबा /56/ , बन्दापरवर /59/ , लुत्फ़ /59/ , हमसाया /59/ , ज़रखरीद /63/ , बदमस्त /64/ , दिल-बस्तगी/64/, मर्जे-लाइलाज /66/ , तबियते-दुश्मनां-नासाज़ /70/ , तलबगार/70/, दखलअन्दाज़ /71/ , मरीज़ा /97/ , जाहिरा /97/ , मुख्तार-नामा /105/ , मक्र-भरी सूरत /106/ ।

मन्दिर-दीप : खैरबाद /102/, गुस्ताखी सरज़द /113/ , नादिम /136/ , ख्वास्तगार/136/ , महरूम /141/ , मुस्तहक /142/ , शर्मिन्दगी की बाइस /158/ , बिला ताम्मुल /207/ , तरद्दुद /224/, खैर-मकदम/225/ , अहबाब/226/ , तफक्कुरात /230/ , इम्दाद/234/, नफ़ासत /241/ ।

मयखाना : वस्फ़ /12/ , इखलाक /12/ , ब-जिद /16/ , ज़िनाकारी /17/ , नुक्ते-निगाह / 19/ , ~~सरगुजश्त~~ सरगुजश्त /20/, दस्तरखान /21/, रागिब /23/, पाकीजगी /24/, नाकारा/26/, किस्सानवीस /26/, संजीदगी/28/, रग़बत /29/, इन्तहा /37/ , हिज़ाब/39/, बेगैरती /40/, निशानात/47/, गुफ्तगू /51/, मख़सूस /51/ , लावल्द /52/, महफूज /52/ , वजूहात /52/ , पुरलुत्फ़ /60/ , निज़ाम/60/, शिरकत/60/ , इस्लाह/62/ , उन्सियत/62/, तम्बीह/63/, गुस्ल/67/, मुख़तलिफ़ /83/, मुकम्मिल फेहरिस्त/84/ , अख्तियारात/87/, मुता-स्सिर /91/ , नाकिस /93/ , इबरतअंगेज़ /96/ ।

हिज़ हाइनेस : ~~तालीमयाफ्ता~~ तालीमयाफ्ता /12/ , किफायतशारी/16/, फैयाजी/16/, लबरेज /22/, माह-ब-माह/32/ , अंगुश्तनुमाई/32/, यक-लख़्त /37/ , मुख़ालफ़त /43/ , बन्दूकची/49/ , बदसलूकी/54/ , फ़रायज़ /55/ , तहय्या /55/ , फ़ाहिशा /61/, हुक्म-उदूली /66/, हायल/67/ , नेकबख़्त /67/ , दोजख़ / 67/ , रियासतबदर/82/, तस्लीमख़म /92/, दिलबस्तगी/100/, रब्त-जब्त/100/ , तबियतसीरी /100/

तिजारत/107/ , इखराजात/119/, फ़रेफ्ता /120/, नत्थीशुदा/123/, हैवतनाक/128/, हुदूद/132/, इन्तज़ामात/133/ , मुलाज़िमान/134/, दोस्त-नवाज़ /138/ , रफ़े-दफ़े /138/ , मज़मून/144/ , हकूक/150/, दर्दसिरी/159/ , सफेदपोश/162/ , इश्किया/163/ , इरशाद/164/, मदाख़लत/170/ , सुबह-गज़रदम/188/ ।

अध्याय के समग्रावलोकन से हम निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुंच सकते हैं :--

§1§ ऋषभजी का लेखन समाजाभिमुख रहा है , अतः उनके साहित्य में पारिवारिक, सामाजिक , आर्थिक , मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक आदि समस्याओं का आकलन भलीभांति हुआ है ।

§2§ ऋषभचरण जैन में शिल्पगत सजगता मिलती है । प्रत्यक्षतः उनके कथा-साहित्य में दो विधियां उपलब्ध होती हैं -- वर्णनात्मक और आत्मकथनात्मक ; किन्तु परोक्ष रूप से इन दो विधियों के अन्तर्गत अनेक प्रविधियों का उन्होंने सफलतम प्रयोग किया है । उनके कथा-साहित्य में हमें अनेक शिल्प-गत प्रयोग भी मिलते हैं । अतः कहा जा सकता है कि प्रेमचन्दयुग में प्रयोगों का सूत्रपात ऋषभजी के द्वारा हुआ । उनकी प्रत्येक कथा-कृति एक नवीन शिल्प को लेकर अग्रसरित होती है ।

§3§ लेखक ने परिवेश के अनुरूप भाषा का प्रयोग किया है । वस्तुतः भाषा के सफल प्रयोग के कारण ही परिवेश अत्यंत विश्वसनीय बन पड़ा है ।

§4§ परिवेश की भांति चरित्र-सृष्टि में भी भाषाकीय शक्ति को नज़रअन्दाज़ नहीं किया गया है । यह गौरतलब है कि इस सन्दर्भ में लेखक की तुलना प्रेमचन्द से सहजतया की जा सकती है ।

§5§ ऋषभजी की भाषाशैली में हमें सरलता और सुबोधता, प्रवाहिकता , संक्षिप्तता , सांकेतिकता , प्रतीकात्मकता , व्यंग्यात्मकता , मुहावरेदानी , नवीन भाषाभिव्यंजना प्रभृति गुण मिलते हैं ।

====== XXXXXX ======

:: सन्दर्भानुक्रम ::

§1§ तपोभूमि : पृ. 189 ।

§2§ भाई : पृ. 28 । §3§ दान तथा अन्य कहानियाँ : पृ. 169 ।

§4§वही : पृ. 70 । §5§ द्रष्टव्य : तीन इक्के : पृ. 96 ।

§6§ रखैल : दान तथा अन्य कहानियाँ : पृ. 133 ।

§7§ सूखे सेमल के वृन्तों पर : डा. पारूकांत देसाई : पृ. 85 ।

§8§ द्रष्टव्य : महानगर की मीता : रजनी पनीकर ।

§9§ भाई : पृ. 88 । §10§ वही : पृ. 91-92 ।

§11§ हिज़ हाइनेस : पृ. 43-44 । §12§ ज़नानी सवारियाँ : पृ. 97 ।

§13§ द्रष्टव्य : साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : डा. पारूकांत : पृ. 65 ।

§14§ ज़नानी सवारियाँ : पृ. 89 ।

§15§ भारत का सांस्कृतिक इतिहास : हरिदत्त वेदालंकारः पृ. 275 ।

§16§ द्रष्टव्य : भारतीय सामाजिक समस्याएँ : डा. एम.एल. गुप्ताः
पृ. 280 ।

§17§ भारत का सांस्कृतिक इतिहास : हरिदत्त वेदालंकार : पृ. 277 ।

§18§ द्रष्टव्य : सत्याग्रह : पृ. 15 । §19§ हिज़ हाइनेस : पृ. 59-61 ।

§20§ मन्दिर-दीप : पृ. 278 ।

§21§ दुनियादारी : दान तथा अन्य कहा. : पृ. 43 ।

§22§ धरती धन न अपना : जगदीशचन्द्र : पृ. 229 ।

§23§ रखैल : दान तथा अन्य कहा. : पृ. 138 ।

§24§ सत्याग्रह : पृ. 69 । §25§ रहस्यमयी : पृ. 68 ।

§26§ हिज़ हाइनेस : पृ. 61-62 । §27§ तपोभूमि : पृ. 28 ।

§28§ वही : पृ. 195 । §29§ वही : पृ. 196 ।

§30§ हिज़ हाइनेस : प्रवचन /भूमिका/ : पृ. 5 ।

§31§ वही : पृ. 10 ।

§32§ द्रष्टव्य : समीक्षायण : डा. पारूकांत देसाई : पृ. 129 ।

§33§ द्रष्टव्य : साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : डा. पारूकांतःपृ. 15 ।

§34§ द्रष्टव्य : वही : पृ. 61 ।

§35§ विस्तार के लिए देखिए : समीक्षायण : डा. पारूकांत : पृ. 132 ।

§36§ जनानी सवारियाँ: पृ. 73 । §37§ तीन इक्के : पृ. 66-67 ।

§38§ " हिन्दी उपन्यास साहित्य की विकास-परंपरा में साठोत्तरी उपन्यास " : प्रबंध : डा. पारूकांत : पृ. 565 ।

§39§ सत्याग्रह : पृ. 44 । §40§ वही : पृ. 73-74 ।

§41§ भाई : पृ. 15 । §42§ वही : पृ. 20 ।

§43§ द्रष्टव्य : साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : डा. पारूकांत : पृ155।

§44§ वही : पृ. 67 । §45§ हिज़ हाइनेस : पृ. 188 ।

§46§ भय : दान तथा अन्य कहा. पृ. 20 ।

§47§ राल्फ फोक्स की परिभाषा ।

§48§ "38" के अनुसार : पृ. 422 ।

§49§ मुरदाघर : पृ. 179 । §50§ साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास:पृ. 56 ।

§51§ चारु-चन्द्रलेख : पृ. 347 । §52§ भाई : पृ. 18 ।

§53§ वही : पृ. 18-19 । §54§ मन्दिर-दीप : पृ. 25 ।

§55§ ज़नानी सवारियाँ : पृ. 16 । §56§ रखैल : दान तथा. पृ. 136 ।

§57§ "आधुनिक हिन्दी औपन्यासिक लेखिकाओं में नगरीय परिवेश का चित्रण " : शोध-प्रबंध : श्रीमती अर्चना गौतम : 1993 : पृ. 284 ।

§58§ ज़नानी सवारियाँ : पृ. 27 । §59§ भाई : पृ. 23-24 ।

§60§ वही : पृ. 30 । §61§ वही : पृ. 28 §62§ वही : पृ. 28 ।

§63§ वही : पृ. 28 §64§ वही : पृ. 28-29 ।

§65§ हिज़ हाइनेस : पृ. 80 ।

§66§ पाँच रूपये का कर्ज़ : दान तथा अन्य कहा. : पृ. 128 ।

§67§ वही : पृ. 128 । §68§ भाई : पृ. 7 ।

§69§ दान : दान तथा अन्य कहा. : पृ. 9 ।

§70§ दुनियादारी : दान तथा अन्य कहा. : पृ. 34 ।

§71§ से §73§ : वही : पृ. क्रमशः 49 , 55 , 125 ।

§74§ भाई : पृ. 32 । §75§ वही : पृ. 83 ।

§76§ मयखाना : पृ. 95 §77§ मन्दिर-दीप : पृ. 25 ।

§78§ वही : पृ. 113 §79§ तपोभूमि : पृ. 195 ।

§80 से 86§ : वही : पृ. क्रमशः 193 , 167, 166, 165, 161, 149, 143 ।

§87§ मयखाना : पृ. 51 §88§ चम्पाकली : पृ. 28 ।

§89§ भाई : पृ. 103 §90§ वही : पृ. 103 ।

§91§ चम्पाकली : पृ. 27-28 §92§ भाई : पृ. 26-27 ।

§93§ कौड़ियों का हार : दान तथा अन्य कहा. : पृ. 115 ।

§94§ दान : दान तथा अन्य. : पृ. 11 ।

§95§ संयोग : वही : पृ. 94 । §96§ सत्याग्रह : पृ. 28-29 ।

§97§ "कविता" : पत्रिका : सं. सुरेश दलाल : पृ. 53 ।

§98§ निग्रह : दान तथा अन्य कहा. : पृ. 162 ।

§99§ सुधार की खोज : वही : पृ. 154 ।

§100§ हिज़ हाइनेस : पृ. 5 §101§ वही : पृ. 10-14 ।

§102§ ज़नानी सवारियां : पृ. 10-11 । §103§ वही : पृ. 12 ।

§104§ तीन इक्के : पृ. 74 §105§ वही : पृ. 75 ।

§106§ दान तथा अन्य कहा. : पृ. 19 ।

§107§ यहां से जो पृष्ठ दिए हैं वे "दान तथा अन्य कहानियां "से सम्बद्ध हैं ।

§108§ दान तथा अन्य कहा. : पृ. क्रमशः 28, 30, 31, 41, 45, 47, 57, 63, 64, 75, 83, 107, 139, 149, 148, 153, 163, 164, 164, 168, 168, 170 ।

§109§ हर हाइनेस : पृ. क्रमशः 13, 37, 40, 52, 5, 7, 9, 15, 26, 35, 36, 40, 42, 46, 47, 51, 65, 84, 99 ।

§110§ मयखाना : पृ. क्रमशः 73, 75, 88, 66 ।

§111§ चम्पाकली : पृ. क्रमशः 60, 64, 68, 3, 6, 19, 26, 33, 44, 49, 56, 62, 72, 79, 89, 102, 113 ।

§112§ हिज़ हाइनेस : पृ. क्रमशः 10, 30, 36, 39, 48, 57, 69, 80, 96, 102, 112, 119, 143, 146, 154, 164 ।

§113§ भाई : पृ. क्रमशः 13, 13, 31, 37, 60, 63, 89, 92, 36 ।

§114§ तीन इक्के : पृ. क्रमशः 21, 40, 71, 71, 72, 13, 13, 27, 36, 36, 41, 41, 72, 82 ।

§115§ जनानी सवारियाँ : पृ. क्रमशः 10, 10, 12, 12, 20, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 45, 58, 67, 83, 86, 87, 105, 106, 106 ।

§116§ मयख़ाना : पृ. 63 ।

§117§ तीन इक्के : पृ. क्रमशः 82, 70, 4, ।

§118§ वही : पृ. क्रमशः 56, 6, 6, 4 ।

§119§ द्रष्टव्य : हर हाइनेस : पृ. कोष्ठक में दिए गए हैं ।

§120§ द्रष्टव्य : दान तथा अन्य कहानियाँ : पृष्ठ कोष्ठक में दिए गए हैं ।

§121§ तीन इक्के ।

§122§ चम्पाकली §123§ मन्दिर-दीप §124§ मयखाना

§125§ तपोभूमि §126§ हिज हाइनेस §127§ हर हाइनेस

§128§ दान तथा अन्य कहानियाँ §129§ तीन इक्के ।

§130§ चम्पाकली §131§ मन्दिर-दीप §132§ तपोभूमि

§133§ हिज़ हाइनेस ।

§134§ हर हाइनेस : पृ. क्रमशः 59, 59, 32, 54, 75, 75, 79, 81, 80, 93, 95, 99, 99 ।

§136§ तीन इक्के : पृ. क्रमशः 4, 4, 8, 41, 41, 60, 60, 60, 64, 75, 78 ।

§136§ दान तथा अन्य कहानियाँ : पृ. क्रमशः 11, 12, 17, 16, 34, 45, 62, 76, 99, 103, 103, 102, 104, 104, 106, 111, 117, 137, 146, 164, 165, 170, 170, 171 ।

§137§ चम्पाकली : पृ. क्रमशः 3, 9, 9, 9, 9, 71, 72, 109 ।

§138§ मन्दिर-दीप : पृ. क्रमशः 108, 119, 144, 146, 153 ।

§139§ राजकुमार भोज : पृ. क्रमशः 3, 4, 9, 11, 15, 16, 21, 20, 22, 24, 26, 27, 27, 29, 28, 32, 33, 35, 37, 37, 39, 39, 40, 44, 44, 44, 44, 48, 52, 55, 55, 54, 56, 58, 63, 63, 64, 64, 6[illegible]

§140§ भाई : पृ. 7, 8 ।

§141§ सत्याग्रह : पृ. क्रमशः 6, 13, 29, 51, 51, 61 ।

§142§ तपोभूमि : पृ. क्रमशः 20, 26, 40, 51, 51, 57, 57, 85, 85, 89, 95, 109, 113, 127, 127, 129, 136, 138, 138, 186, 191 ।

§143§ हिज़ हाइनेस : 9, 9, 21, 23, 34, 40, 54, 57, 61, 122, 122, 124, 125, 148, 166, 169 ।

§144§ ज़नानी सवारियाँ : पृ. क्रमशः 5, 11, 11, 5, 12, 27, 49, 101 ।

§145§ हर हाइनेस : पृ. क्रमशः 13, 11, 36, 36, 75, 40 ।

§146§ दान तथा अन्य कहानियाँ : पृ. क्रमशः 71, 79, 87, 98, 98, 104, 110, 134, 157, 157, 165, 168, 168, 171, 85, 96 ।

§147§ तीन इक्के : पृ. क्रमशः 3, 3, 4, 7, 16, 16, 21, 30, 64, 77 ।

§148§ चम्पाकली : पृ. क्रमशः 3, 63, 67, 80, 90, 93, 98 ।

§149§ मन्दिर-दीप : पृ. क्रमशः 11, 49, 99, 105, 164, 217 ।

§150§ मयख़ाना : पृ. क्रमशः 11, 32, 50, 50, 54, 59, 69, 74, 83, 86, 96 ।

§151§ भाई : पृ. क्रमशः 7, 8, 12, 14, 14, 15, 14, 15, 15, 18, 19, 18, 30, 31, 32, 32, 33, 33, 37, 40, 42, 55, 46, 47, 48, 50, 51, 51, 51, 51, 52, 54, 54, 57, 65, ~~68~~ 83, 88, 91, 100, 100 ।

§152§ सत्याग्रह : पृ. क्रमशः 5, 14, 14, 68 ।

§153§ तपोभूमि : पृ. क्रमशः 30, 32, 32, 41, 124, 127, 165, 179 ।

§154§ हिज़ हाइनेस : पृ. क्रमशः 9, 10, 16, 46, 55, 101, 102, 161 ।

§155§ हर हाइनेस : पृ. क्रमशः 5, 38, 38, 38, 6, 15, 19, 37, 40, 40, 61, 68, 68, 68, 70 ।

§156§ दान तथा अन्य कहा. : पृ. क्रमशः 94, 94, 94, 120, 127, 132, 159 ।

§157§ तीन इक्के : पृ. क्रमशः 50, 56, 74, 85 ।

§158§ चम्पाकली : पृ. क्रमशः 46, 69 ।

§159§ मन्दिर -दीप : पृ. क्रमशः 101 ।

§160§ मयखाना : 59, 59, 59, 82, 93 §161§ भाई : 33, 93 ।

§162§ सत्याग्रह: 5, 5, 5, 16 §163§ तपोभूमि : 32, 121, 145 ।

===== xxxxxx =======